स्कूल की अनकही कहानियाँ

तीन-चौथाई, आधी कीमत, बज्जी-बज्जी
मोहम्मद खादीर बाबू

चित्रांकन
सुरेश बी वी

पाठ्यपुस्तक
नुआईमन

चित्रांकन
चित्रा के एस

स्कूल के दोस्त
जूपका सुभद्रा
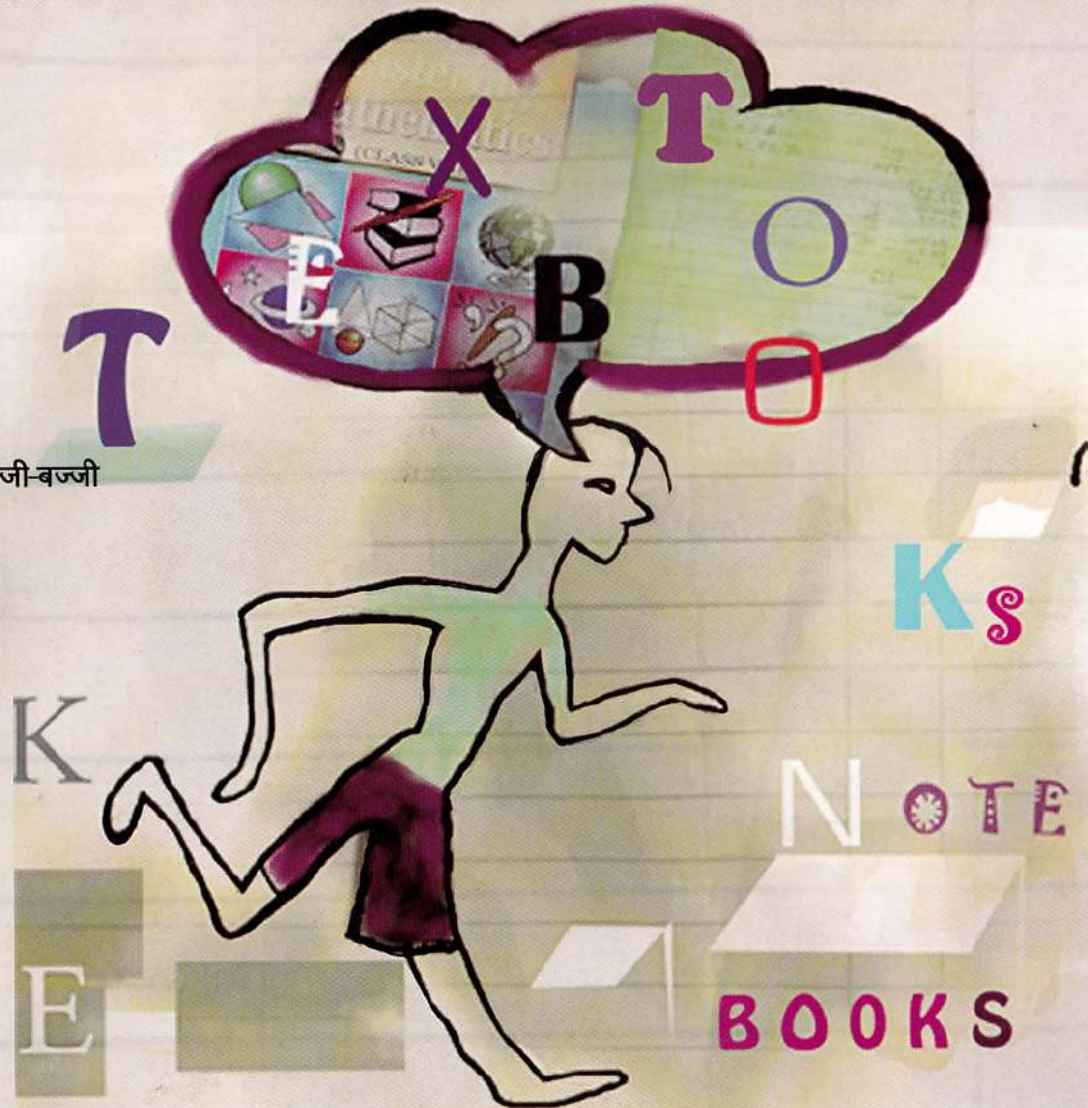
चित्रांकन
सौम्या अनन्तकृष्णा

एकलव्य

तीन-चौथाई, आधी कीमत, बज्जी-बज्जी

मोहम्मद खादीर बाबू

चित्रांकन
सुरेश बी वी

अँग्रेज़ी से अनुवाद
स्वयं प्रकाश

शृंखला सम्पादक
सुशील शुक्ल

एकलव्य

छात्रगण, कृपया ध्यान दें। सभी कक्षाओं की पाठ्यपुस्तकें आ गई हैं। जो छात्र पाठ्यपुस्तक खरीदना चाहें वे तीसरी घण्टी के बाद दोपहर में मूल्य चुकाकर इन्हें कार्यालय से प्राप्त कर सकते हैं। लेपाक्षी की नोटबुक अभी नहीं आई हैं। जो नोटबुक खरीदना चाहते हैं वे ५४ रुपए अग्रिम जमा करा दें। बाद में नोटबुक माँगनेवालों को नोटबुक नहीं दी जा सकेंगी।

हस्ताक्षर - प्रधानाध्यापक, विश्वोदय

हमारे स्कूल के कार्यालय के पास की पीली दीवार पर टँगे काले बोर्ड पर सफेद चॉक से लिखी गई यह सूचना लगी थी।

पहली सूचना पाठ्यपुस्तकों के सम्बन्ध में थी। उससे हमें कोई मतलब नहीं था। दूसरी सूचना नोटबुक के बारे में थी। ये सूचना हमारे मतलब की थी।

मैं ऐसा इसलिए कह रहा हूँ कि जिन माँ-बाप ने हमें जनम दिया उन्होंने छठवीं या सातवीं कक्षा में भी कभी मुझे नई पाठ्यपुस्तकें दिलवाने की परवाह नहीं की। मैंने हमेशा पुरानी पुस्तकों से काम चलाया। अब वो लोग तो मुझे पाठ्यपुस्तकें दिलवाएँगे नहीं, तो मैंने सोचा, क्यों न किसी ऐसे लड़के से किताबें माँग ली जाएँ जो अब उसके काम नहीं आ रहीं?

इस कोशिश में मेरी मुलाकात एक सेट्टी लड़के से हुई जिसका नाम गाडेमसेट्टी रमेश था और जो मेरे घर के पास ही रहता था। वह नवीं कक्षा में था। उसने अभी-अभी आठवीं कक्षा की परीक्षा पास की थी। उसके पास आठवीं की किताबें हो सकती थीं जिनकी मुझे ज़रूरत थी। मैंने तय किया कि अगर मुझे किताबें खरीदनी ही पड़ीं तो मैं ये किताबें ही खरीदूँगा।

क्यों? क्योंकि पुरानी किताबों की अपनी ही कहानियाँ होती हैं।
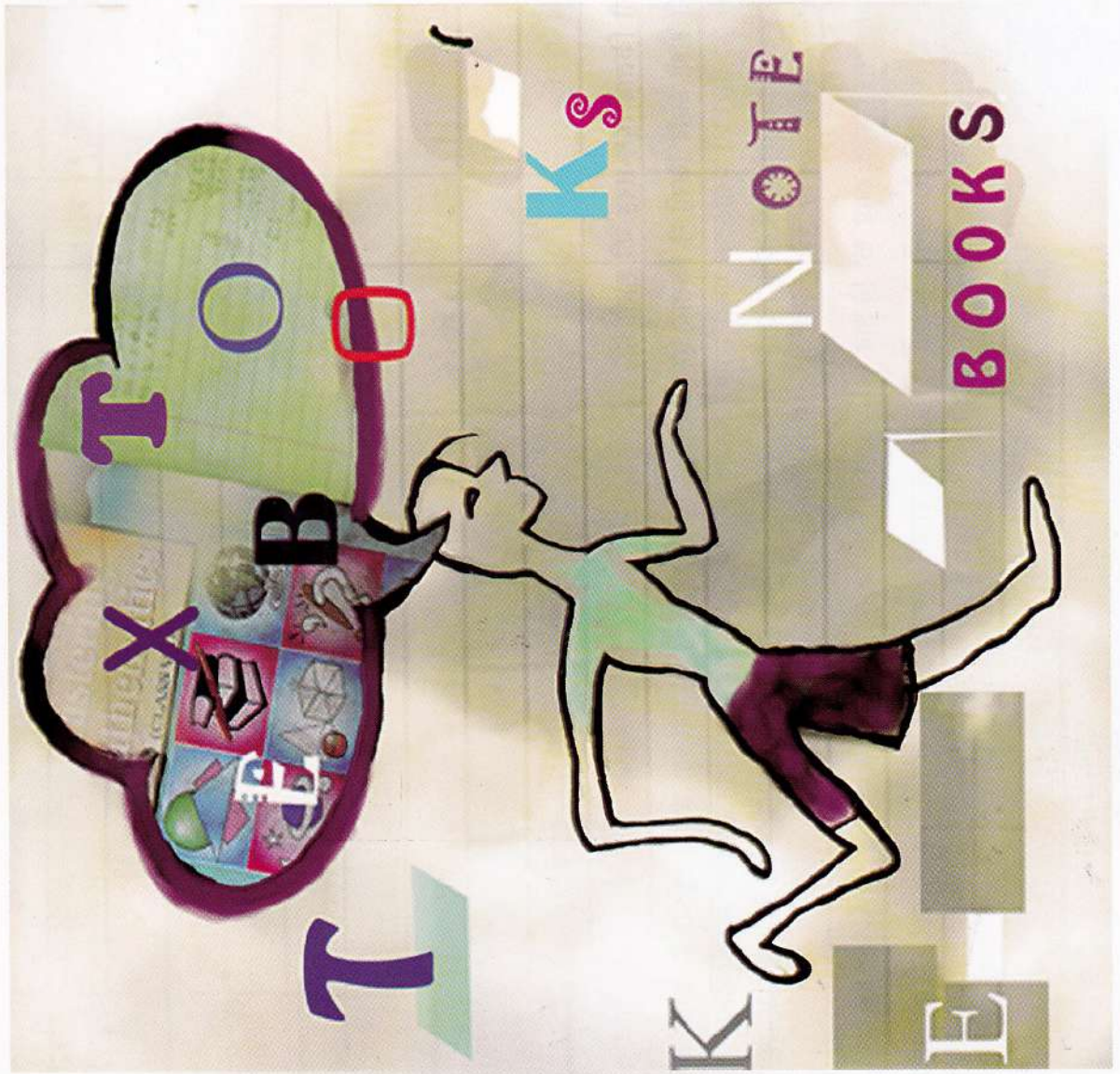
पुरानी किताबें तीन तरह की होती हैं।

पहली श्रेणी अगर किसी ने किताबें इसी साल खरीदी हैं, उन पर कागज़ का कवर चढ़ाया है, कपड़े की दुकान से साड़ी लपेटने की पारदर्शी प्लास्टिक पन्नी लाकर खाकी कवर पर चढ़ाई है, उसे पिन लगाकर पक्का किया है, पूरे साल भीतरी पन्नों पर पेन या पेंसिल से कोई निशान नहीं लगाया है और पन्नों को साफ-सुथरा रखा है – तो अगले साल जब वह इन किताबों को बेचने जाएगा उसे इनकी तीन-चौथाई कीमत आराम से मिल जाएगी।

इसका मतलब आठ रुपए की किताब के छह रुपए मिल जाएँगे।

लेकिन अगर किसी ने अपनी किताबों को ठीक से सम्हालकर नहीं रखा, उन पर कवर नहीं चढ़ाया, इस-उस को देते रहे और भीतरी पन्ने गन्दे कर दिए – तो उसकी किताबें आधे दाम पर बिकेंगी।

यानी आठ रुपए की किताब के चार रुपए ही मिलेंगे।

फिर किताबों की एक और श्रेणी है।

मान लो किसी ने पुरानी किताबें खरीदीं, उन्हें इतना खराब कर दिया कि हाथ लगाते ही पन्ने बिखरने लगे – तो उन्हें बज्जी-बज्जी कहेंगे।

ऐसी किताबें एक-चौथाई कीमत में बिकेंगी।

यानी आठ रुपए की किताब के सिर्फ दो रुपए मिलेंगे।

लेकिन बज्जी-बज्जी किताबें कोई क्यों लेगा? या आधी कीमत की मुड़ी-तुड़ी किताबें? हमें सिर्फ तीन-चौथाई कीमत वाली किताबें लेना चाहिए, वो भी आधी कीमत में।

चूँकि ये सारी शर्तें सिर्फ गाडेमसेट्टी रमेश की किताबें ही पूरी कर सकती थीं इसलिए मैं उसके पास किताबें माँगने गया।

उसने मेरी तरफ देखा तक नहीं और बोला – "सवाल ही नहीं उठता। कितने जतन से हमने अपनी किताबों को रखा है। आधी कीमत में नहीं, चाहो तो तीन-चौथाई कीमत में ले लो। मुझे तो नवीं कक्षा की किताबें खरीदने के लिए उसमें और पैसे मिलाने पड़ेंगे।"

समझ में नहीं आया क्या जवाब दूँ। चुपचाप उसे देखता रहा और सिर खुजाता रहा।

देखने में वह दुबला-पतला और सींकिया लगता है, मानो अभी हवा में घुल जाएगा, लेकिन एक किलो चने खा जाता है। उसकी जेब में चने भरे रहते हैं जिन्हें वह दिन भर चबाता रहता है। जब वह हँसता है, चने के सफेद-सफेद टुकड़े उसके काले-काले मसूड़ों पर चिपके दिखाई देते हैं।

उसके मसूड़ों का खयाल आते ही मुझे एक बात सूझी। मैंने कहा – "यार रमेश। मेरे पिता किसी दाल मिल की मोटर ठीक करने नेल्लोर गए हैं। उन्होंने कहा था कि लौटते समय आधा थैला चना ज़रुर लेते आएँगे। उसमें से थोड़े मैं तुझे दे दूँगा। तू मुझे आधी कीमत पर किताबें दे दे।" भरपूर सफाई के साथ मैं झूठ बोला।

उसने मेरा मज़ाक उड़ाते हुए कहा – "चल रहने दे। मेरे घर पर खूब चना है। साथ खाने के लिए गुड़ भी है। मुझे तेरे चने नहीं चाहिए।"

अभी मैं सोच ही रहा था कि क्या जुगाड़ बैठाऊँ कि रमेश की माँ आ गई। बोली – "हाँ तो ठीक है न? आधी कीमत में क्यों नहीं दे देता उसे तेरी किताबें? रमेश की माँ बहुत अच्छी है। बहुत दयालु! उसे कहानियाँ बहुत पसन्द हैं। वह हर महीने
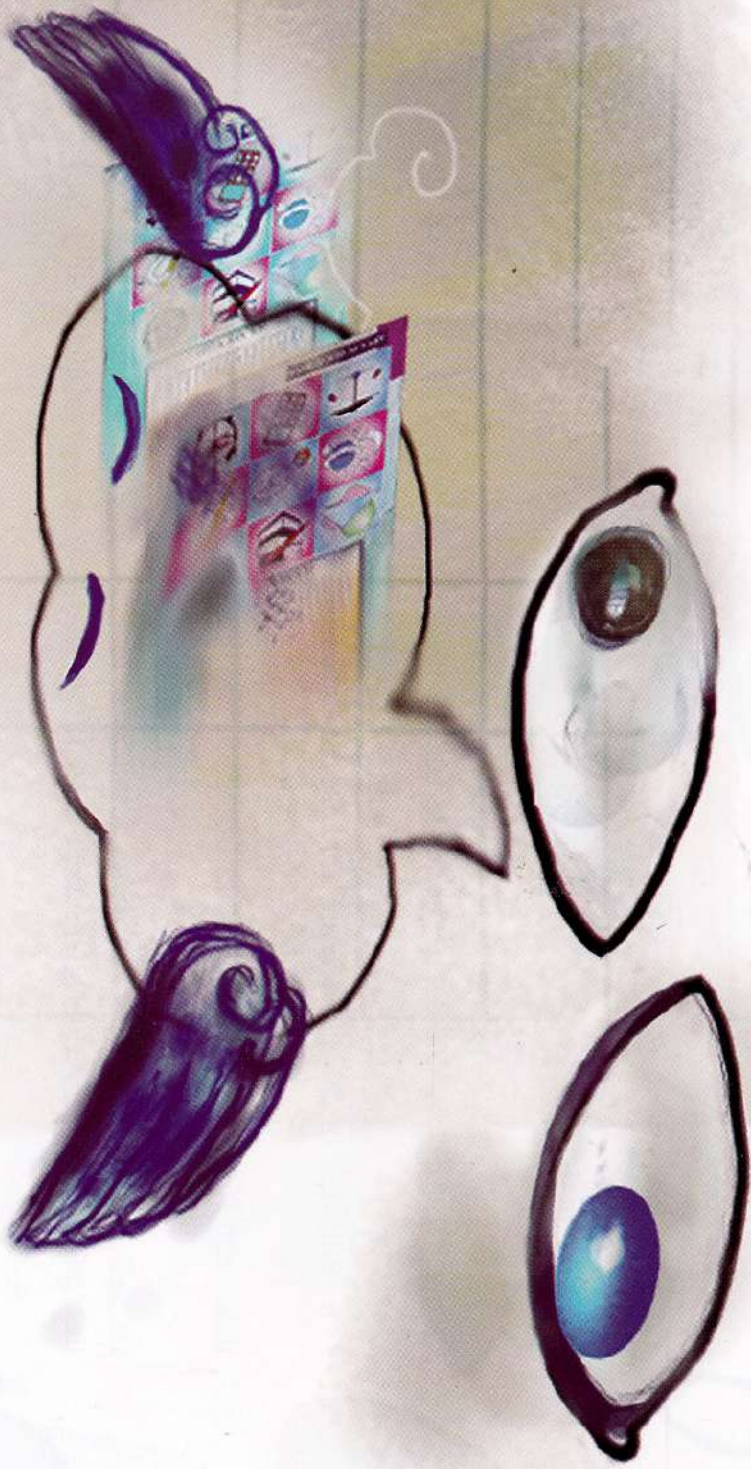
चन्दामामा और बालमित्र मँगाती है। वह मुझे बहुत पसन्द करती है क्योंकि मैं जब भी उसके घर जाता हूँ ये पत्रिकाएँ बड़े चाव से पढ़ता हूँ।" "देख रमेश! उसने तुझसे कुछ माँगा है। तो तू दे क्यों नहीं देता? हर चीज़ को पैसे से जोड़कर नहीं देखना चाहिए।" उसने कहा और भीतर चली गई।

मैंने वहीं से बात को पकड़ा। "देख! तेरी माँ भी कह रही है किताबें देने को। माँ की बात नहीं टालनी चाहिए। माँ की आज्ञा का पालन करेगा तो पुण्य मिलेगा। मेरी माँ ने किताबें देने को कहा होता तो मैं आधी कीमत तो क्या, मुफ्त में दे देता। फौरन!" मैंने उसकी ठुड्डी पकड़कर कहा।

(मेरी माँ मर जाएगी पर ऐसा करने को नहीं कहेगी। कहेगी भी तो मैं नहीं मानूँगा। मैंने अपनी सातवीं कक्षा की बज्जी-बज्जी किताबें एक सेट्टी को तोल के हिसाब से बेच दी थीं क्योंकि कोई बन्दा उन्हें लेने को तैयार नहीं था। हाँ, लेकिन मुफ्त में तो नहीं दी थी न!)

रमेश ने मुँह बनाया और बोला – "ठीक है! इस साल दे देता हूँ। अगले साल मैं जानता हूँ तू फिर आएगा नवीं की किताबें माँगने। तब आधी कीमत में नहीं दूँगा।"

"ठीक है यार! तू भी क्या चीज़ है। अगले साल तो, ऊपरवाले की मेहरबानी रही तो पूरी कीमत में खरीदूँगा।" तीन-चौथाई वाली आधी कीमत में खरीदी किताबें उठाते हुए मैंने कहा।

अब आठवीं कक्षा की किताबों की मेरी चिन्ता तो खत्म हो गई थी, लेकिन नोटबुक की चिन्ता बाकी थी। नोटिस बोर्ड पर जिन लेपाक्षी नोटबुक की बात थी, वे काफी मन ललचाने वाली होती हैं।
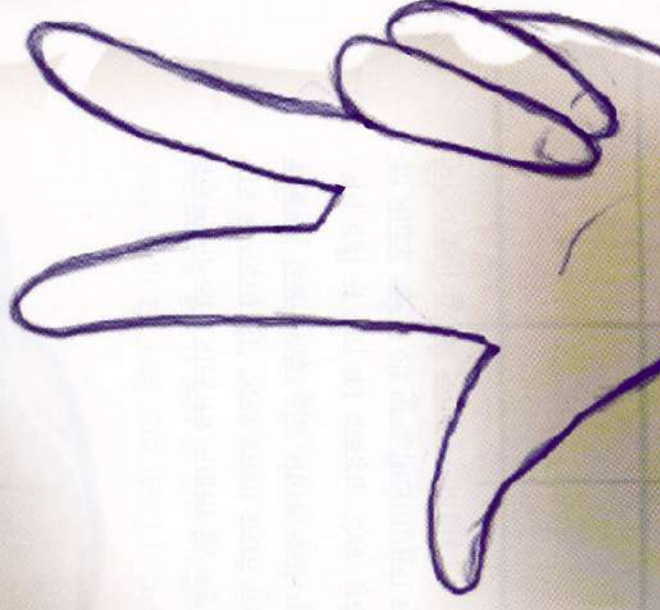
लेकिन क्या वे मेरे भाग्य में थीं? क्या मेरे पिता मुझे वैसी नोटबुक दिलवा सकते थे?

मैं सोच ही रहा था कि नोटबुक पाने के लिए कैसे-क्या किया जाए कि तभी मुझे कण्डुला मलकोण्डाराव दिखाई दिया जो गुलमोहर के पेड़ के नीचे खड़ा उँगलियों पर कुछ गिन रहा था।

"क्या मलकोण्डइया? क्या गिन रहा है?" मैंने उसके पास जाकर पूछा।

"कुछ नहीं यार! मेरे पास नोटबुक खरीदने के पैसे हैं। मैं लेपाक्षी नोटबुक भी खरीद सकता हूँ। लेकिन प्रधानाध्यापकजी कह रहे हैं कि लेपाक्षी नोटबुक आने में थोड़ा समय लगेगा। तो तब तक क्या करेंगे? तो मैं सोच रहा हूँ तब तक के लिए छह नोटबुक खरीद लूँ क्या? कच्चा काम करने के लिए?"

ईर्ष्या के मारे मेरा तन-बदन सुलग उठा।
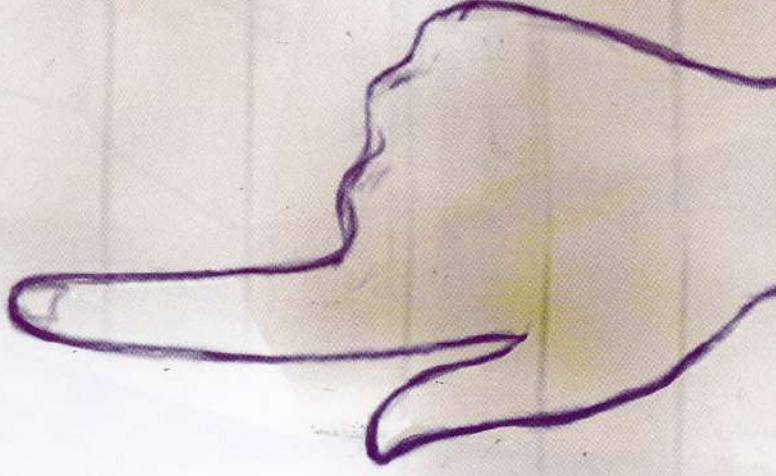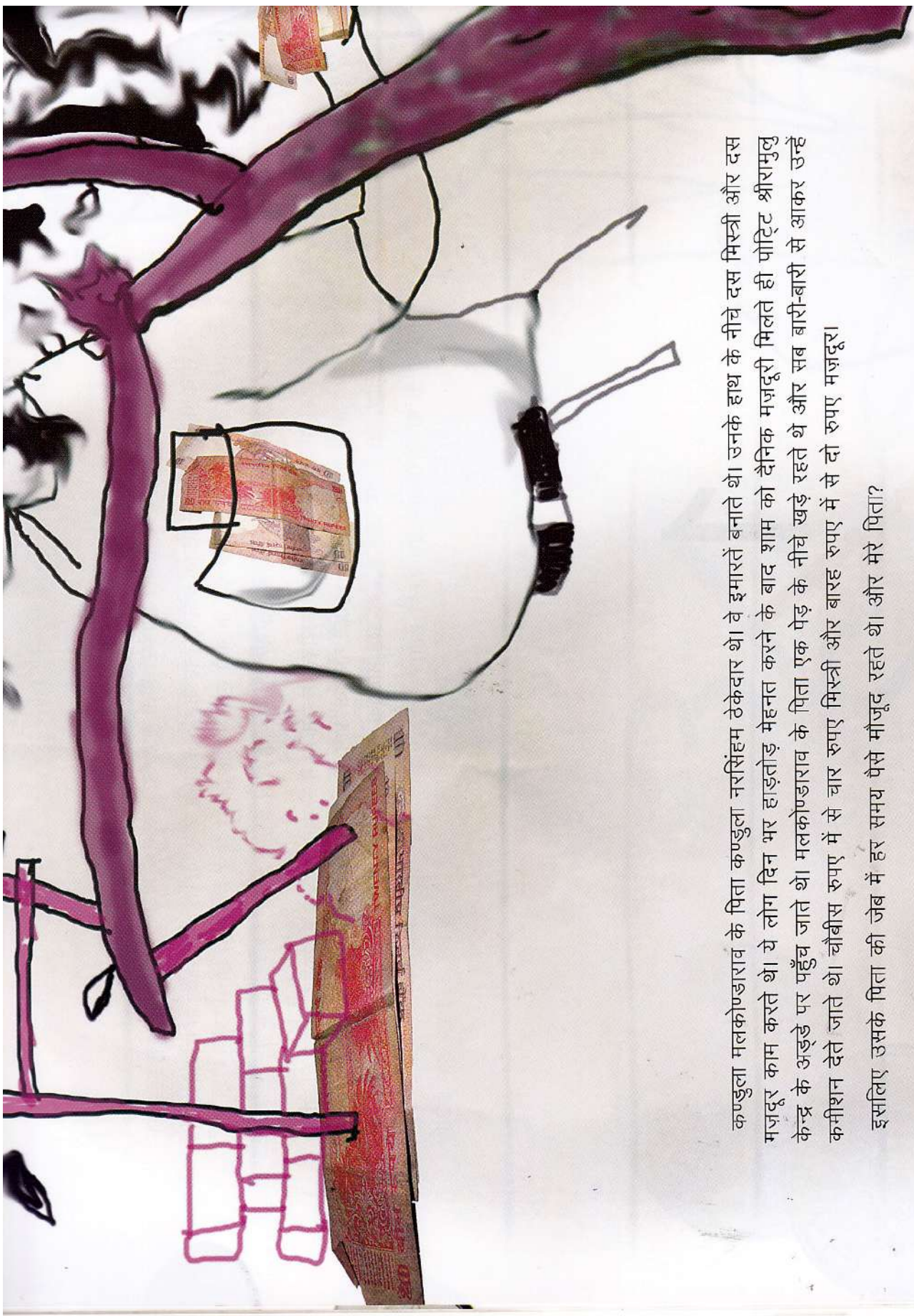
कण्डुला मलकोण्डाराव के पिता कण्डुला नरसिंहम ठेकेदार थे। वे इमारतें बनाते थे। उनके हाथ के नीचे दस मिस्त्री और दस मज़दूर काम करते थे। ये लोग दिन भर हाड़तोड़ मेहनत करने के बाद शाम को दैनिक मज़दूरी मिलते ही पोट्टि श्रीरामुलु केन्द्र के अड्डे पर पहुँच जाते थे। मलकोण्डाराव के पिता एक पेड़ के नीचे खड़े रहते थे और सब बारी-बारी से आकर उन्हें कमीशन देते जाते थे। चौबीस रुपए में से चार रुपए मिस्त्री और बारह रुपए में से दो रुपए मज़दूर।

इसलिए उसके पिता की जेब में हर समय पैसे मौजूद रहते थे। और मेरे पिता?

किसी दिन पैसे मिलते, किसी दिन नहीं मिलते। फिर पिता को अपने हाथ के नीचे काम करने वालों को भी पैसे देने पड़ते थे। उनसे उन्हें कुछ नहीं मिलता था। इसलिए जब भी मैं पिता से नोटबुक के लिए पैसे माँगता, वह "देखते हैं", "देखते हैं" कह टाल देते थे। जबकि मलकोण्डाराव के पिता तुरन्त कहते थे – "हाँ, ले लो!"
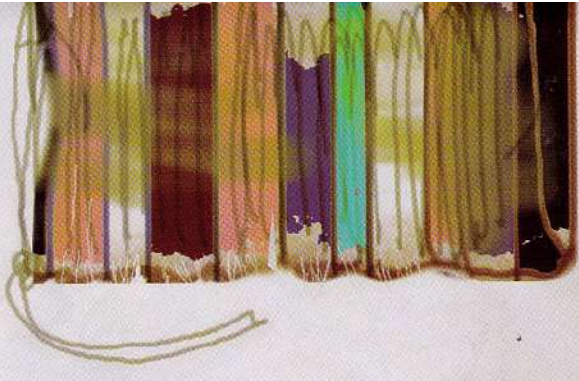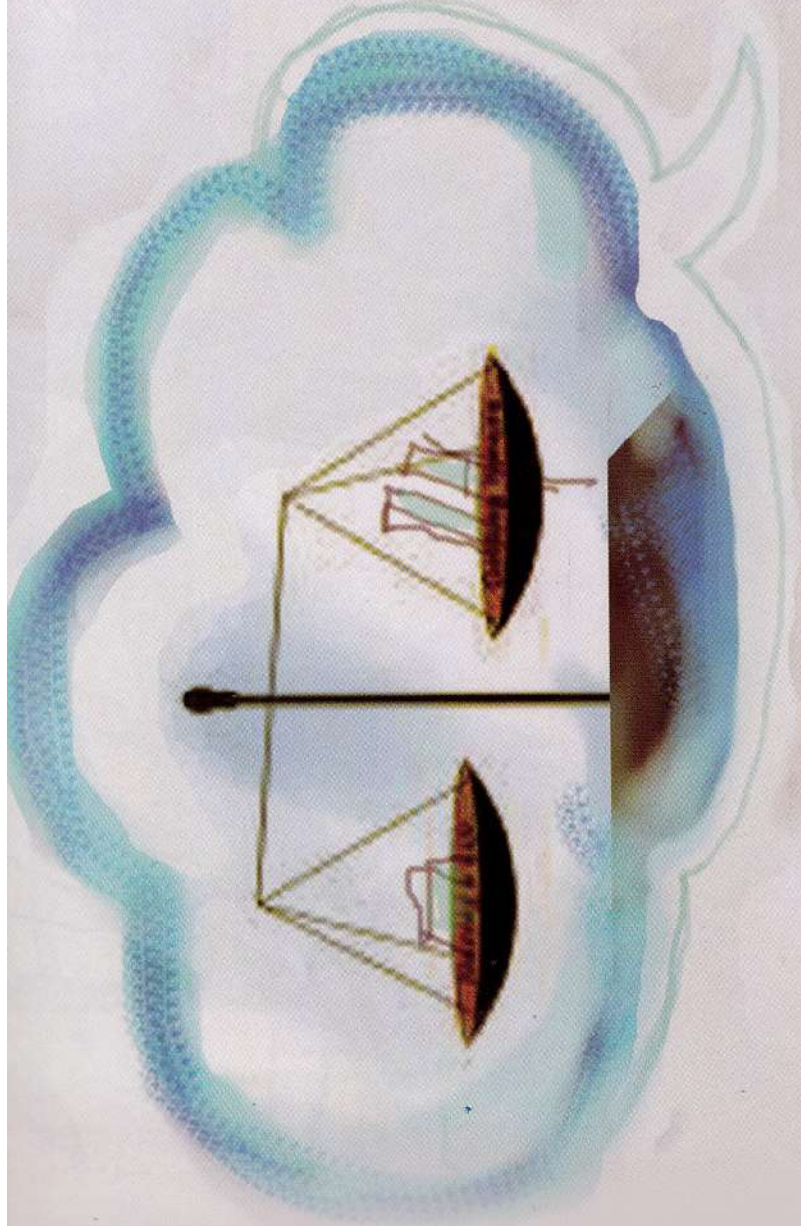
मैंने सोचा अब मुझे खुश हो जाना चाहिए। क्योंकि अगर मलकोण्डाराव को कुछ मिला तो मेरा भी कुछ फायदा हो जाएगा। इसलिए मैंने एक योजना बनाई। "मलकोण्डइया! तुम्हें नोटबुकों की समस्या पता नहीं है। वे श्रीनिवास में एक तरह की होती हैं और चेलपिल्ला में दूसरी तरह की। कुछ तो स्याही सोखती हैं। और कुछ पर एक तरफ लिखो तो दूसरी तरफ दिखता है। तुम मुझे साथ ले चलना। मैं तुम्हें अच्छी वाली दिलवा दूँगा।"

"हाय हाय! तुमने मुझे बचा लिया। ठीक है। चलो!" उसने कहा।

उस शाम को हम दोनों पोट्टि श्रीरामुलु केन्द्र गए, उसके पिता से पैसे लिए, चेलपिल्ला बुक सेन्टर गए और छह नोटबुक खरीद लाए। नोटबुकों के मोटे पुट्ठे देखकर और कागज़ की खुशबू को महसूस कर बड़ी खुशी हो रही थी। लेकिन यह खुशी मेरे लिए नहीं थी।

लौटते समय मैंने पूछा, "मलकोण्डइया! तूने सातवीं कक्षा में बहुत सारी नोटबुक नहीं खरीदी थीं? खूब सारी तू स्कूल के लिए रखता था, और उतनी ही ट्यूशन के लिए। इसके अलावा, मुझे याद है तू ना बड़ी प्रश्न बैंक के महत्वपूर्ण प्रश्नों के लिए अलग नोटबुक रखता था। उन सबका क्या हुआ? "पड़ी हैं। वज़न के हिसाब से बेच दूँगा।"

"ऐसा मत करना। वो सब मुझे दे दे। तेरी लिखावट बहुत सुन्दर है। अगर हम उन्हें सातवीं कक्षा के किसी नए छात्र को दे दें तो उसके बहुत काम आएँगी। तुझे भी पुण्य मिलेगा।" मैंने कहा।

"वाह! क्या आइडिया है!" वह खुश होकर बोला। उसे घर में पुरानी नोटबुक मिल गई। उसने सारी मुझे दे दीं और बोला, "जा! किसी को दे देना!"

कुल मिलाकर बारह नोटबुक थीं।
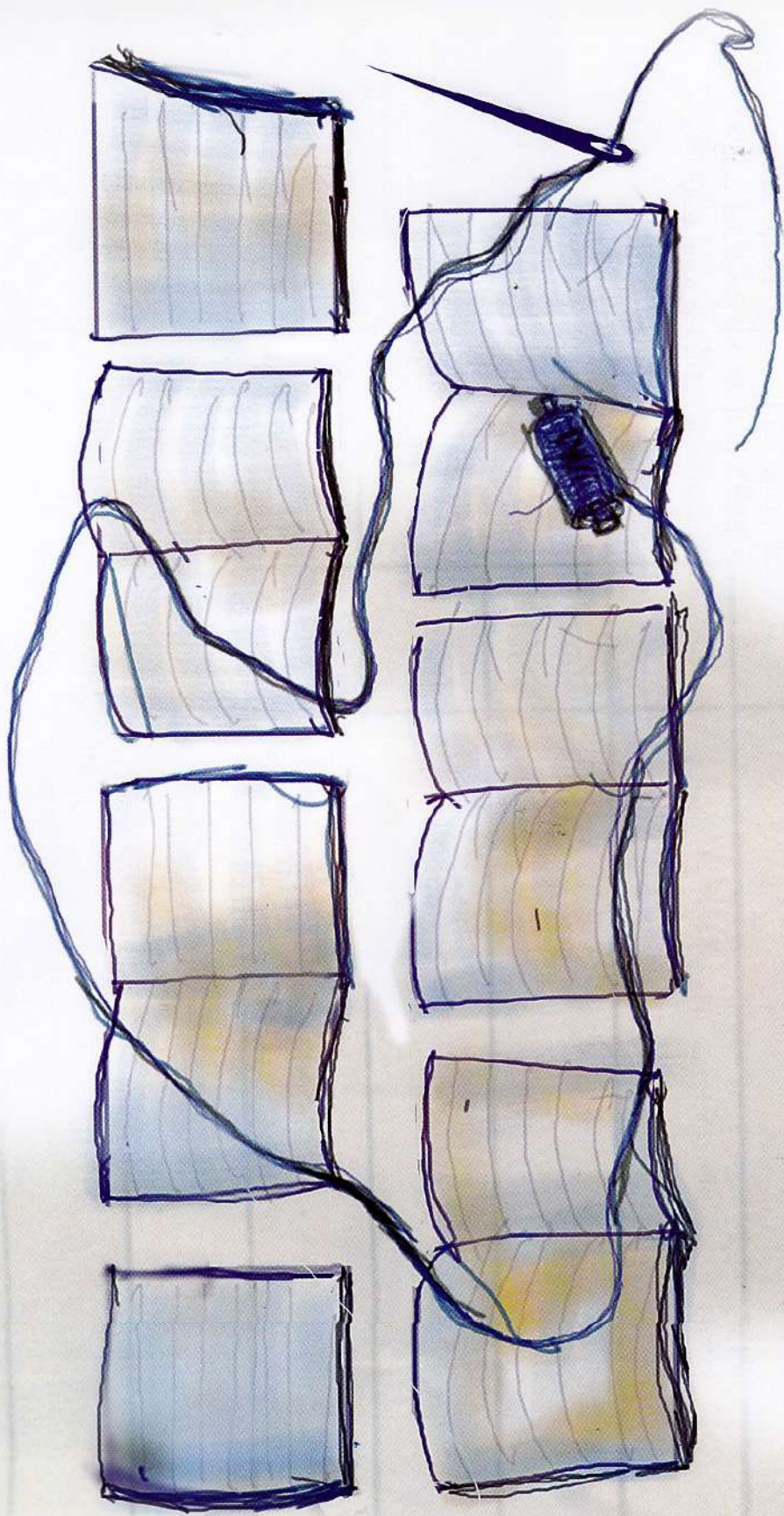
मैं उन्हें घर ले आया। सबको फर्श पर जमा दिया, उनके सामने पालथी मारकर बैठ गया, हर नोटबुक के कोरे पन्नों को सफाई से फाड़ा, उन्हें दो हिस्सों में बाँटा, और फिर उन्हें मोटे कागज़ में लपेटकर सिल लिया। इस तरह मैंने दो नोटबुक बना लीं।

सिलने के बाद उन्हें मैं अपनी नाक के नज़दीक लाया। उनमें से पुराने कागज़ की मस्त खुशबू आ रही थी। "लेपाक्षी नोटबुक तालाब में जाकर डूब मरें! हमारी नोटबुक क्या उनसे कोई कम हैं?"

मैं घर से बाहर निकलकर खड़ा हो गया। मैंने देखा कि गाडेमसेट्टी रमेश नवीं कक्षा की नई पुस्तकें लेकर जा रहा है।

मैं उसके पास गया, उससे कुछ चने लिए जो वह जेब में रखे रहता था और नई पाठ्यपुस्तकों पर एक नज़र डाली। मुझे लगा ये मेरी ही बच्चियाँ हैं जो पराए घर रहने जा रही हैं, लेकिन साल भर बाद फिर मेरे घर आ जाएँगी। इसलिए मैं गाडेमसेट्टी रमेश के साथ उन्हें छोड़ने उसके घर तक गया।

पाठ्यपुस्तक

नुआईमन

चित्रांकन
चित्रा के एस

अँग्रेज़ी से अनुवाद
स्वयं प्रकाश

शृंखला सम्पादक
सुशील शुक्ल

एकलव्य
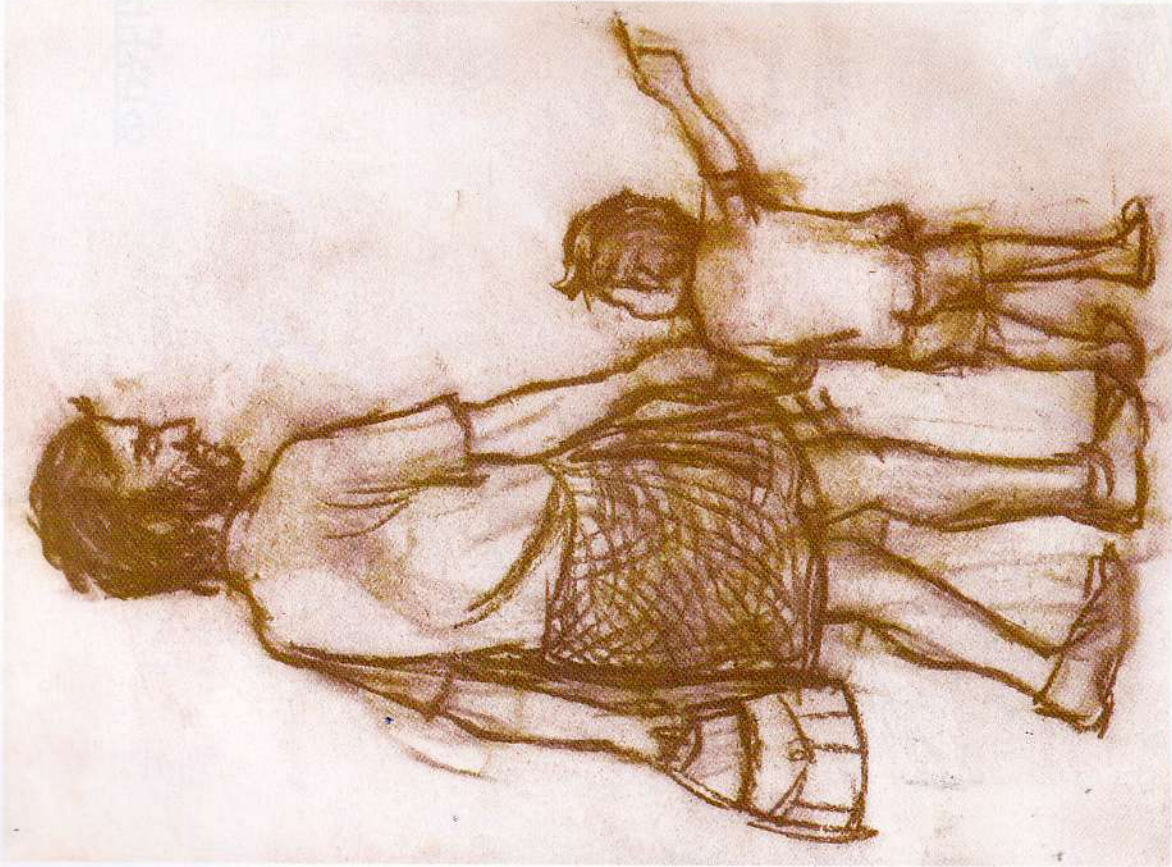
आज साहिर का स्कूल में पहला दिन था।
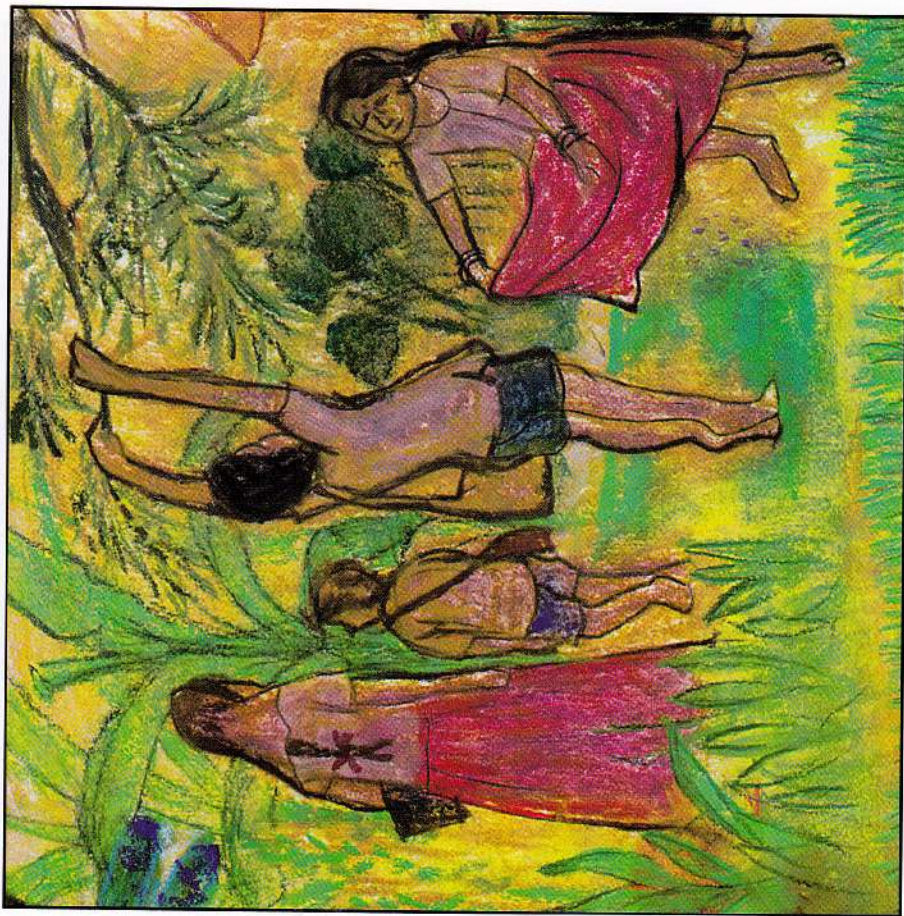
वह अपने अप्पा का हाथ पकड़े, उन्हें लगभग खींचते हुए स्कूल की ओर चला जा रहा था। नई कमीज़, पीठ पर टँगा नया बस्ता और हाथ में छाता – जो अभी एक बार भी नहीं खुला था। सही बात तो यह है कि बस से उतरने के बाद वह चल नहीं रहा था, फुदक रहा था। वह खुश था, लेकिन जल्दी में भी था। बारिश आ गई तो? उसकी नई कमीज़ गन्दी हो गई तो? अप्पा ज़रुर डाँटेंगे। क्या अप्पा रोज़ उसे स्कूल छोड़ने आएँगे? ना ही आएँ तो ठीक रहे। बड़े भैया और दीदी के साथ हँसते हुए और खेलते हुए स्कूल आने में ज़्यादा मज़ा आएगा। लेकिन वह भैया और दीदी के साथ आने की ज़िद नहीं करेगा। नहीं तो क्या पता, उसे स्कूल आने ही न दिया जाए! पहले ही काफी इन्तज़ार करने के बाद और काफी रोने-झींकने के बाद उसे स्कूल जाने का मौका मिला है।
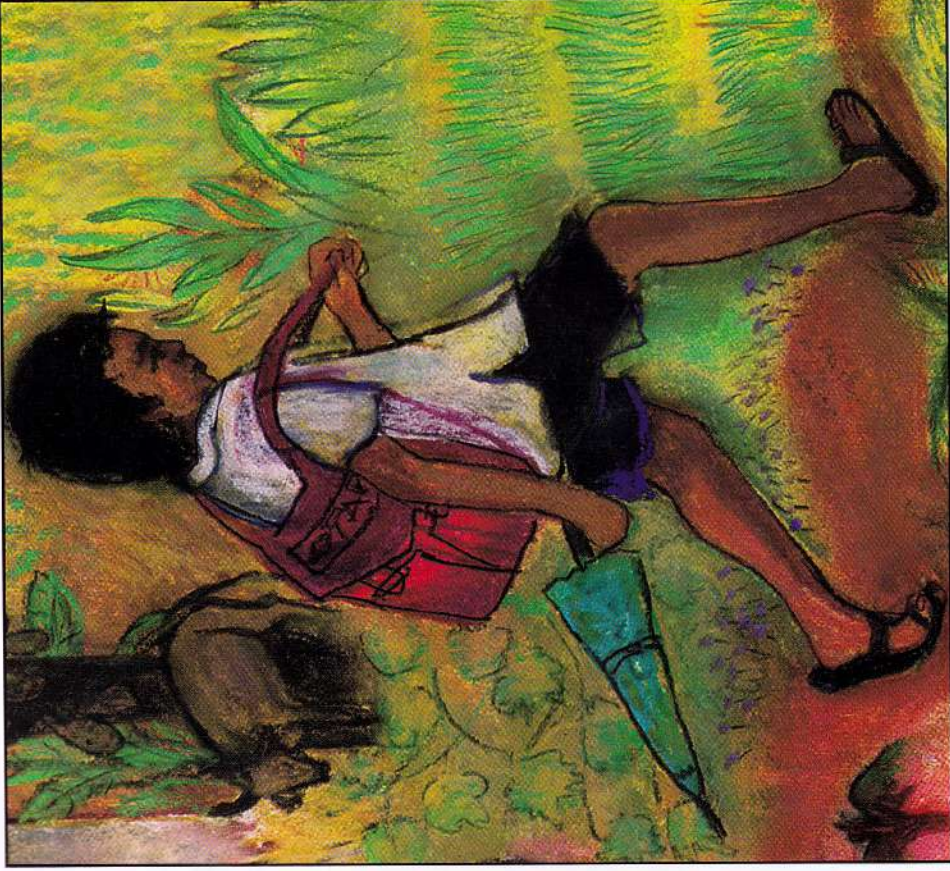
जब परिवार में अड़ोस-पड़ोस के बड़े लड़के-लड़कियाँ स्कूल जाते साहिर धान के खेतों तक उनके साथ-साथ जाता। साहिर सोचता स्कूल कितनी मज़ेदार जगह होती होगी जहाँ टिफिन बॉक्स खोलकर खाना खाया जाता है। वहाँ तस्वीरों से भरी पाठ्यपुस्तकें होती हैं और टीचर अपनी रंगीन चॉक से काली स्लेट पर सही का निशान लगाती हैं! शाम को जब भैया स्कूल से घर लौटते उनकी कमीज़ मैली और धूसर हो चुकी होती। साहिर को लगता मानो वह खुद स्कूल के बड़े-से खेल के मैदान पर चोर-सिपाही खेल रहा हो। वह अम्मा का आँचल पकड़कर रोने-मचलने लगता – "मैं भी स्कूल जाऊँगाऽऽ।" कई बार उसका उत्साह और उत्सुकता देखकर अप्पा ने गोविन्दन सर से पूछा कि क्या साहिर को स्कूल में भर्ती करा सकते हैं? लेकिन जवाब हमेशा एक ही होता था – "पहले उसे पाँच साल का तो हो जाने दो।"

आज जब साहिर कन्धे पर रंगीन बस्ता टाँगे, हाथ में ख्वाबों से सजा छाता लिए पहली बार स्कूल जा रहा था – उसे लग रहा था कि अब वह बड़ा हो गया है।
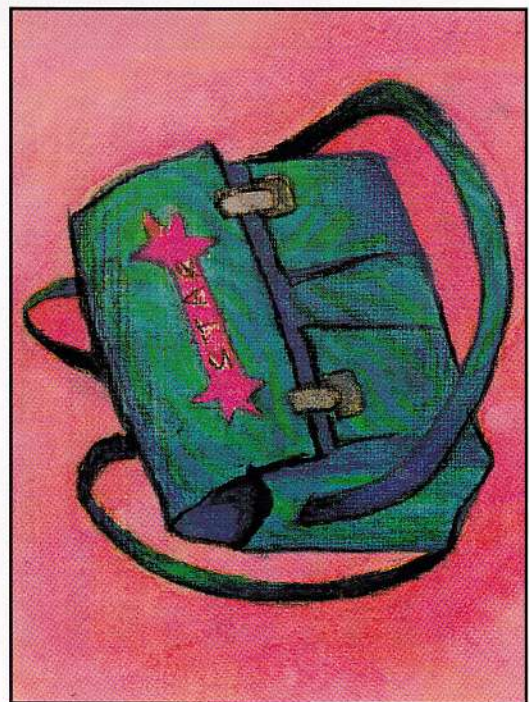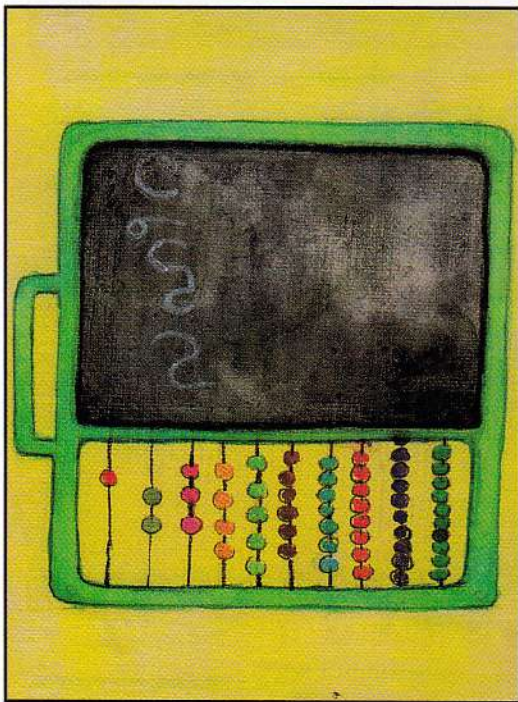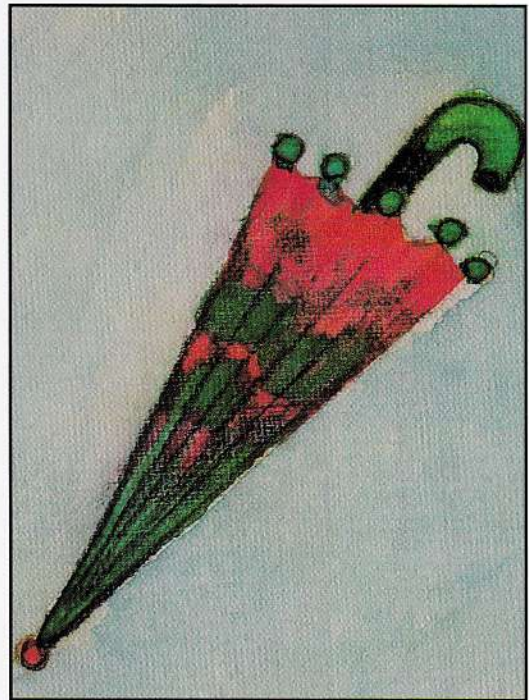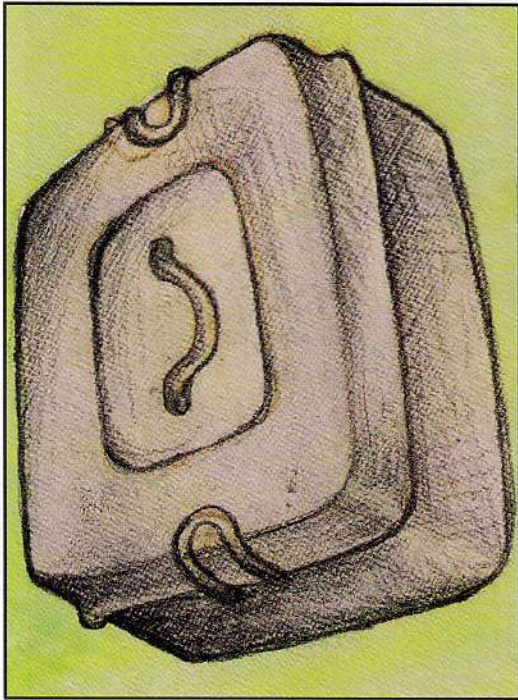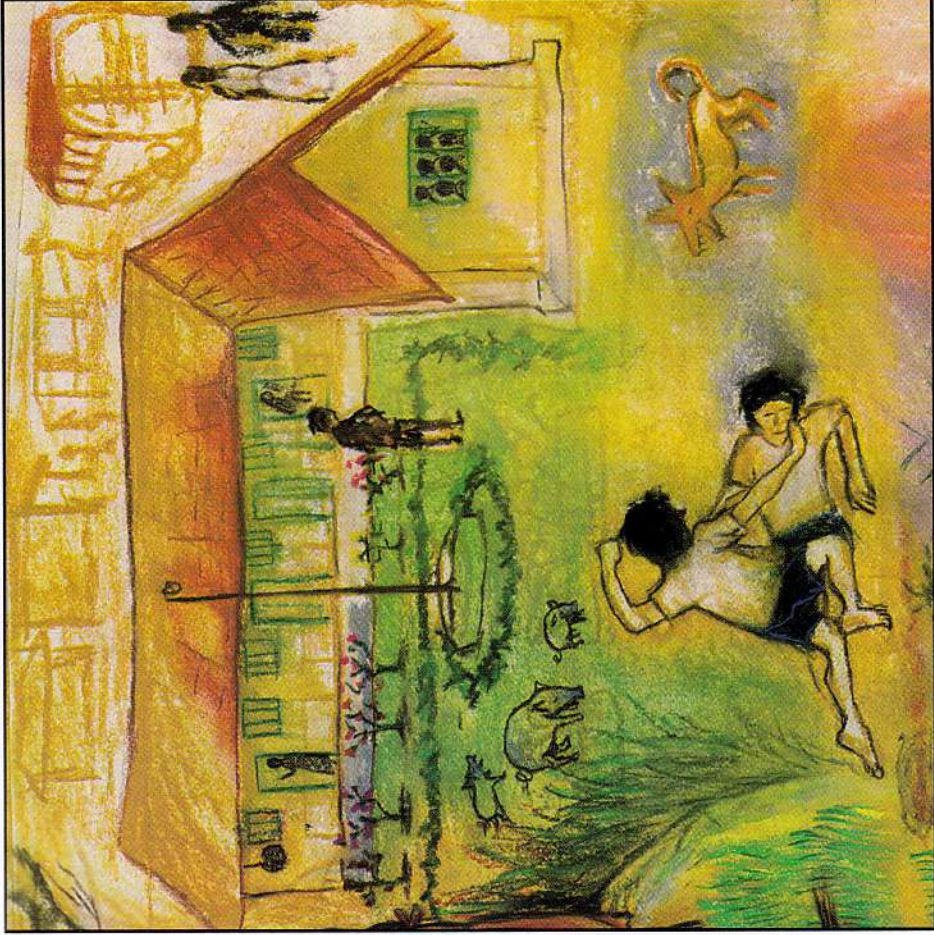
साल दर साल अध्यापक उसकी स्लेट पर लिखे गए अबूझ शब्दों पर सही और गलत का निशान लगाते रहे और इसी तरह एक दिन साहिर छठी कक्षा में पहुँच गया। कभी-कभार वह टीचर द्वारा पिटाई लगाने से दुखी भी हो जाता। स्कूल के जो सपने वह देखता था उनमें पिटाई की कोई जगह नहीं थी। और आजकल उसे सपने आते कि उसने टीचर के हाथ से छड़ी छीनकर खिड़की से बाहर फेंक दी है।

फिर भी, साहिर को स्कूल पसन्द था। उसे गोविन्दन सर, गंगाधरन सर, श्याला मैडम और सुलेमान सर वगैरह अच्छे लगते थे। फिर भी कभी-कभी वह स्कूल में उदास हो जाता था। उसे लगता था जैसे उसके माँ-बाप-दादा और सभी प्यार करने वाले उससे बहुत दूर चले गए हैं। मानो, जिन-जिन से वह प्यार करता था, जो उसे प्यार करते थे, वे कहीं खो गए हैं। जिस दुनिया से वह परिचित था, वह भी मानो बहुत दूर छूट गई है।

साहिर कोझीकोड़ के पास पठानकुन्नु नामक एक छोटे-से गाँव में रहता था। वहाँ उसके बहुत सारे दोस्त थे – रसीद, अब्दुल्ला, रहमान, शफीक, शमसुद्दीन, रहीम – और भी बहुत सारे। हर सुबह और शाम कुरान की आयतें कान में पड़ती थीं। अब्दुल्ला उस्ताद दिन में पाँच बार मस्जिद से अजान देते थे। अप्पा हर समय तस्वीह माला फेरते रहते थे। हर गुरुवार मगरिब के बाद फज्र होता था, उसके बाद चाय पी जाती थी, चाय के बाद पाथिरी बाँटी जाती थी। शाम को मस्जिद के अहाते में दोस्तों के साथ गेंद खेली जाती थी – यह थी साहिर की दुनिया, जहाँ तक उसे याद पड़ता था।

हर सुबह साहिर मदरसे जाता था। मदरसे की कक्षा सुबह सात से नौ बजे तक लगती थी। वहाँ मामू उस्ताद अरबी भाषा, नमाज़ और दूसरी प्रार्थनाएँ सिखाते थे। मदरसे के फौरन बाद साहिर घर भागता था, ताकि तीन किलोमीटर दूर स्कूल जाने के लिए तैयार हो सके। आम तौर पर उसका नाश्ता एक कप कॉफी और कुछ बिस्कुट होता था जो वह सुबह-सुबह ले लेता था। कभी-कभी मदरसे से आकर चाय पी लेता था। नौ बजकर तीस मिनट तक अम्मा उसका बैग जमा देती थी और टिफिन तैयार कर देती थी। वह बस्ता उठाता और स्कूल भागता।
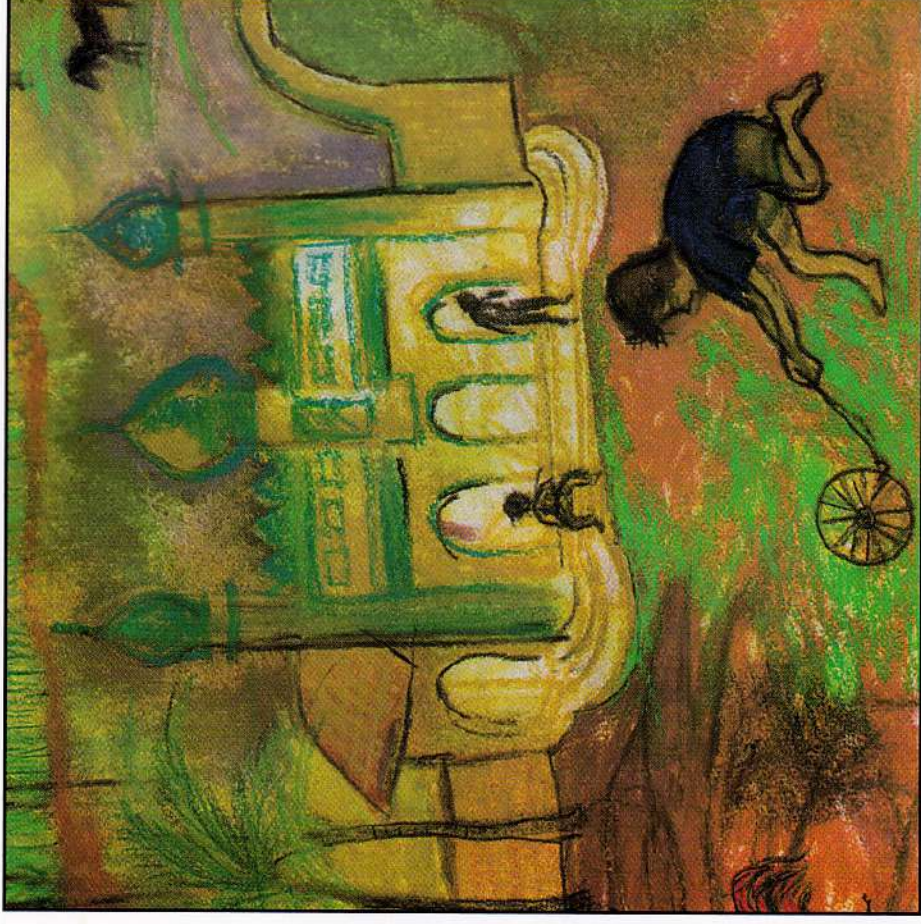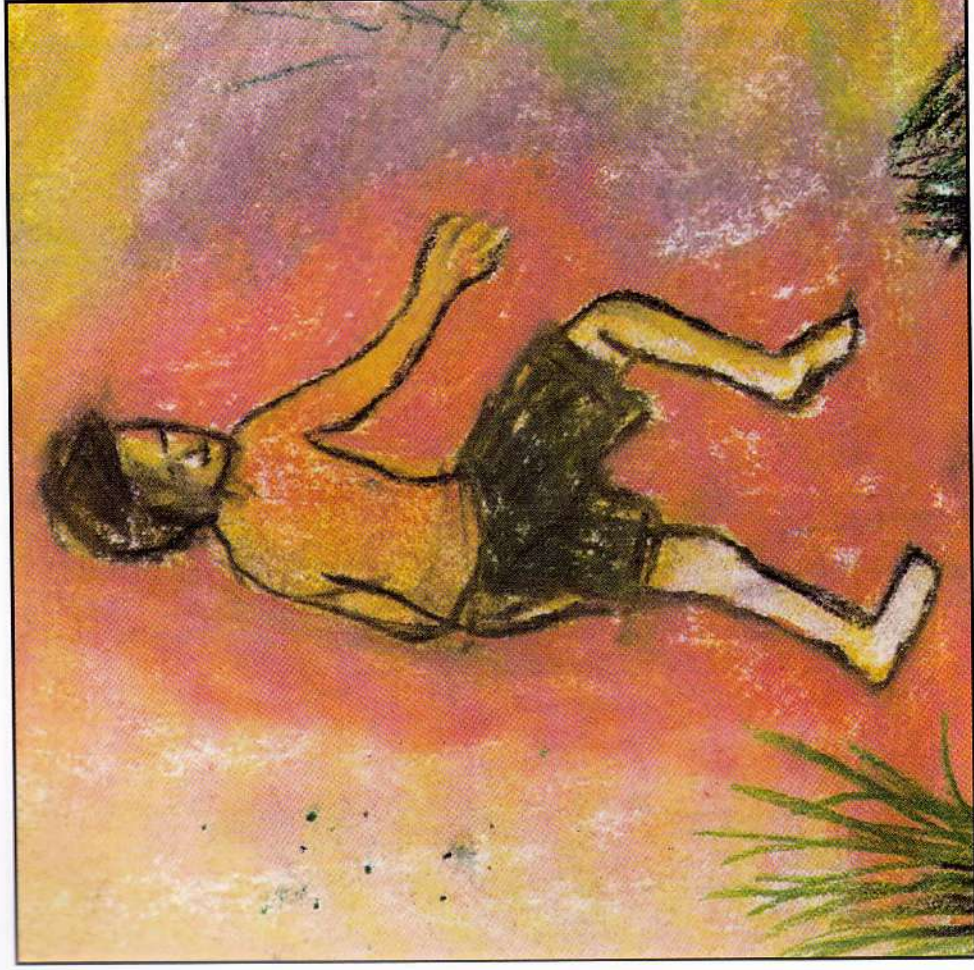
असेम्बली के दिन नौ पचास पर, वरना ठीक दस बजे कक्षाएँ शुरू हो जातीं। अगर उसे दस मिनट की भी देर हो जाती तो पूरे पीरियड कक्षा से बाहर खड़े रहना पड़ता, और फिर क्लास टीचर के पीछे-पीछे स्टाफ रूम तक जाना पड़ता ताकि उस दिन की हाज़िरी लग सके। वहाँ, अन्य अध्यापकों के सामने उसे जमकर लताड़ा जाता।

साहिर का ज़्यादातर स्कूली जीवन मदरसे से स्कूल तक की बेपनाह दौड़ था। कक्षा छूट जाने का डर, टीचर द्वारा डाँटे जाने का डर...

कभी-कभी साहिर को लगता कि वह शीघ्र ही पी टी ऊषा को पछाड़ने लायक हो जाएगा। बेशक, छठी कक्षा तक पहुँचते-पहुँचते वह काफी अच्छा धावक बन चुका था।

स्कूल और मदरसे के अलावा एक और दुनिया थी, जिसे साहिर प्यार करता था। वह थी दादीमाँ की कहानियों और किस्सों की दुनिया। दादीमाँ जब नफीसत का किस्सा सुनातीं, हर कोई उसे सुनने ठहर जाता। दादीमाँ की आवाज़ इतनी अलग और उनका लय-ताल का मेल इतना अच्छा था कि पूछो मत।

साहिर को इतिहास की बहुत सारी बातों की जानकारी इन कहानियों और गीतों से ही मिली। यह सब पाठ्यपुस्तकों में या बलराम और पूमपट्टा में नहीं मिलता था। मोइनुद्दीन शेख की कहानी, बाबर के युद्ध की कहानी, आलिया थंगल की कथा, बदरुल मुनीर और हुस्नुल जमाल की प्रेमकहानी, इरवाड़ी और मुत्थुपेट के औलियाओं की कहानी... दादीमाँ के मुँह से ये कहानियाँ सुनकर ऐसा लगता था जैसे इनके नायकों से हम साक्षात मिल रहे हों। साहिर को कभी-कभी ताज्जुब होता कि इतनी लम्बी-लम्बी कहानियाँ दादीमाँ याद कैसे रख लेती हैं!

लेकिन साहिर को इस बात का अफसोस होता कि स्कूल के उसके दोस्तों में से कोई इन कहानियों-गाथाओं से परिचित नहीं था। "ये कहानियाँ और गीत हमारी पाठ्यपुस्तक में क्यों नहीं हैं?" एक बार उसने दादीमाँ से पूछा। दादीमाँ ने कोई जवाब नहीं दिया। शायद इसका जवाब उन्हें मालूम नहीं था। साहिर ने दोबारा कभी इस बारे में नहीं पूछा।

रामू

कुंजलक्ष्मी
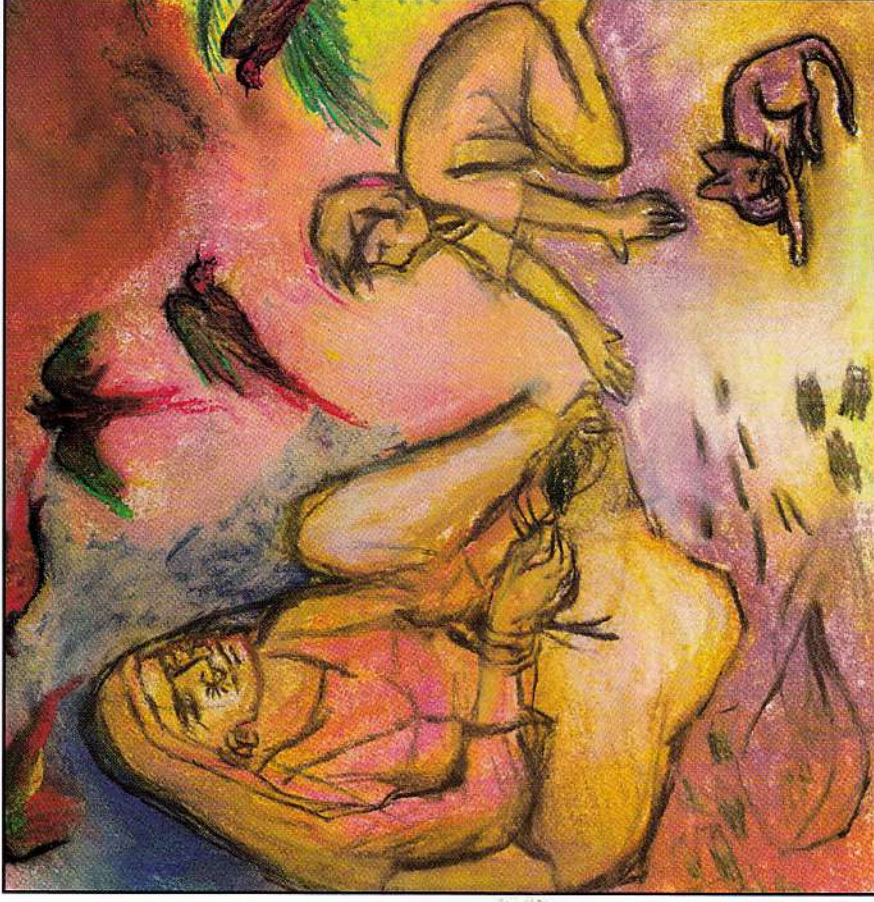
साहिर चाहता था किसी दिन दादीमाँ उसके स्कूल चले और श्याला मैडम की कुर्सी में बैठकर बच्चों को ये कहानियाँ और गीत सुनाएँ। लेकिन क्या कभी ऐसा हो पाएगा? श्याला मैडम कभी इसकी इजाज़त देंगी?

छठवीं "बी" कक्षा में रोज़ चौथा घण्टा मलयालम का होता था। ओणम की परीक्षाएँ नज़दीक थीं इसलिए ज़्यादातर अध्यापक कक्षाओं में पाठ दोहरा रहे थे। मलयालम के टीचर गंगाधरन हमेशा की तरह पाठ्यपुस्तक हाथ में लिए कक्षा में आए। पाठ्यपुस्तक के बीच छड़ी रखी हुई थी। उन्होंने कुछ पुराने प्रश्नपत्र देखे और कक्षा को उनकी तरकीब समझाने लगे। "तुम
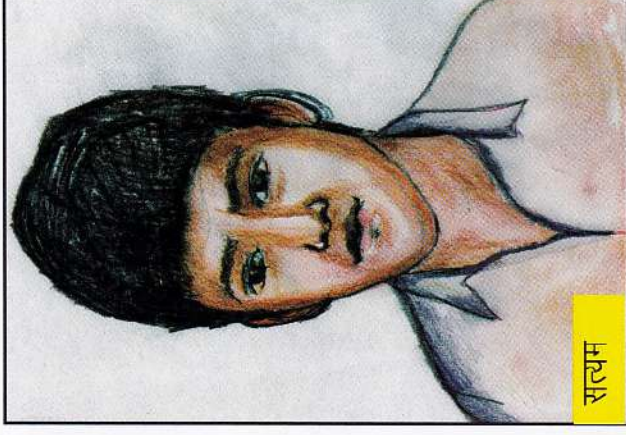
में से अधिकांश सन्दर्भ सहित व्याख्या वाले प्रश्न में अटक जाते हो। अक्सर तो तुम लोगों को पाठ में आए चरित्रों के नाम तक याद नहीं रहते।" उन्होंने अभ्यास के लिए छात्रों से हर पाठ में आए चरित्रों के नाम लिखने को कहा।

साहिर ने भी जल्दी-जल्दी पाठों को पलटा और उनके चरित्रों के नाम लिखने लगा। चार पाठों में ग्यारह पात्र या चरित्र थे। जब सब बच्चे काम पूरा कर चुके तो सर ने साहिर से कहा – किन चरित्रों के नाम लिखे? ज़ोर से पढ़कर बताओ।

साहिर ने कहा –

"पाठ एक – 'अच्छे मित्र', पात्र: कुट्टन, उन्नी, कुंजलक्ष्मी और अम्मू। पाठ दो – 'चालाक रामू', पात्र: रामू, माधवी और अरोमल। पाठ तीन – 'परिश्रम का फल', पात्र: रमन, कुंजुन्नी, सत्यम..."
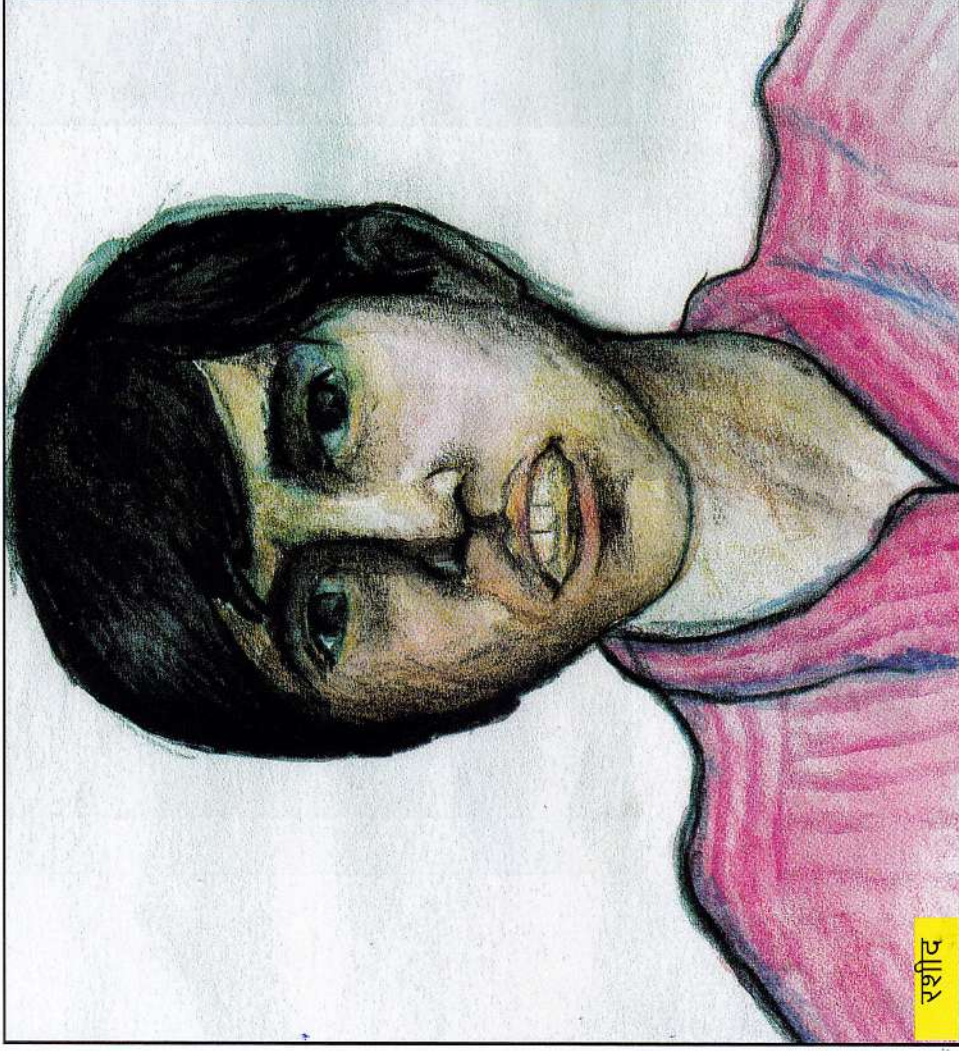
कुछ रुककर दुखभरी लेकिन कड़क आवाज़ में उसने कहा "...और रशीद।"
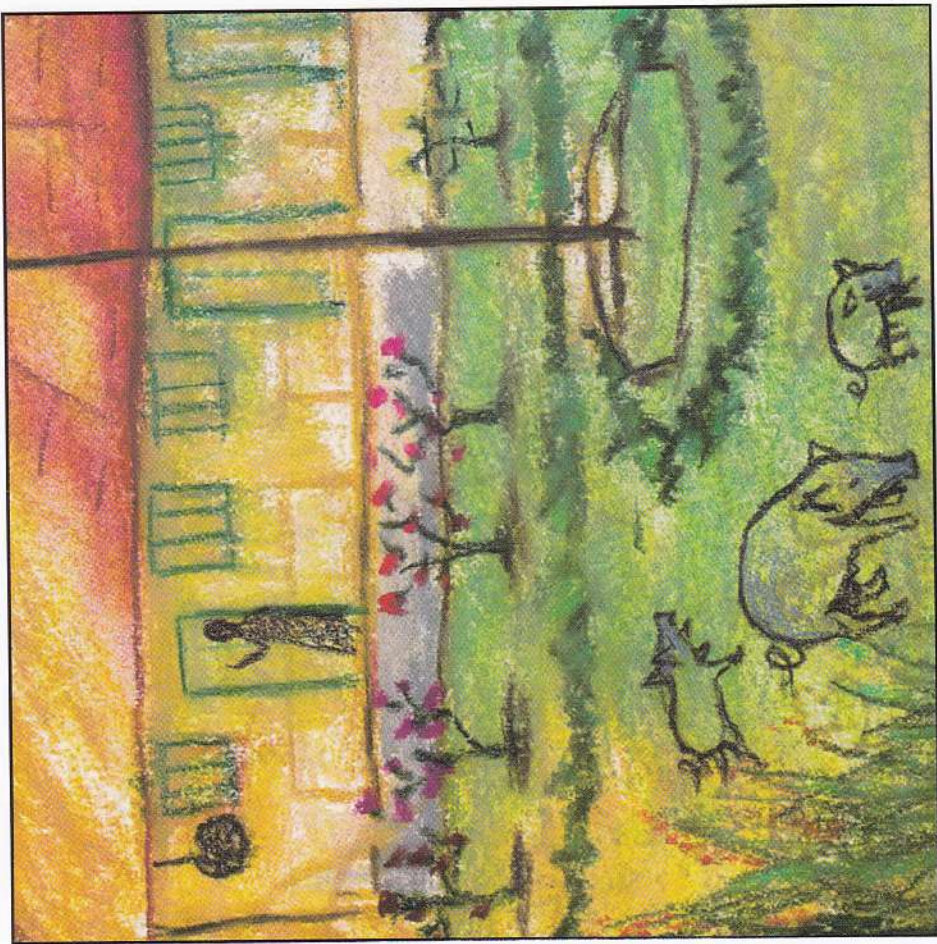
सारी कक्षा खामोश हो गई। गंगाधरन सर ने छड़ी हाथ में ले ली। फ्रेम के पीछे से उन्होंने आश्चर्य से साहिर को देखा। बोले – "क्या था ये?" ये नाम कहाँ से आ गया? ऐसा कोई नाम तो पूरी पाठ्यपुस्तक में कहीं नहीं है।

साहिर हकलाने लगा, "सर, पूरी पुस्तक में एक भी मुस्लिम नाम नहीं है।" सारी कक्षा खिलखिलाकर हँस पड़ी। साहिर ने हिम्मत बटोरकर गंगाधरन सर की तरफ देखा। सर ने टेबल पर ज़ोर से छड़ी फटकारी। सारी कक्षा खामोश हो गई। अपने गुस्से को दबाते हुए सर ने पूछा, "साहिर, क्या तुम साम्प्रदायिकता की बात कर रहे हो?"

साहिर को सर का सवाल समझ में नहीं आया। वह सर को अपनी बात समझाना चाहता था, लेकिन तभी खाने की छुट्टी की घण्टी बज गई।
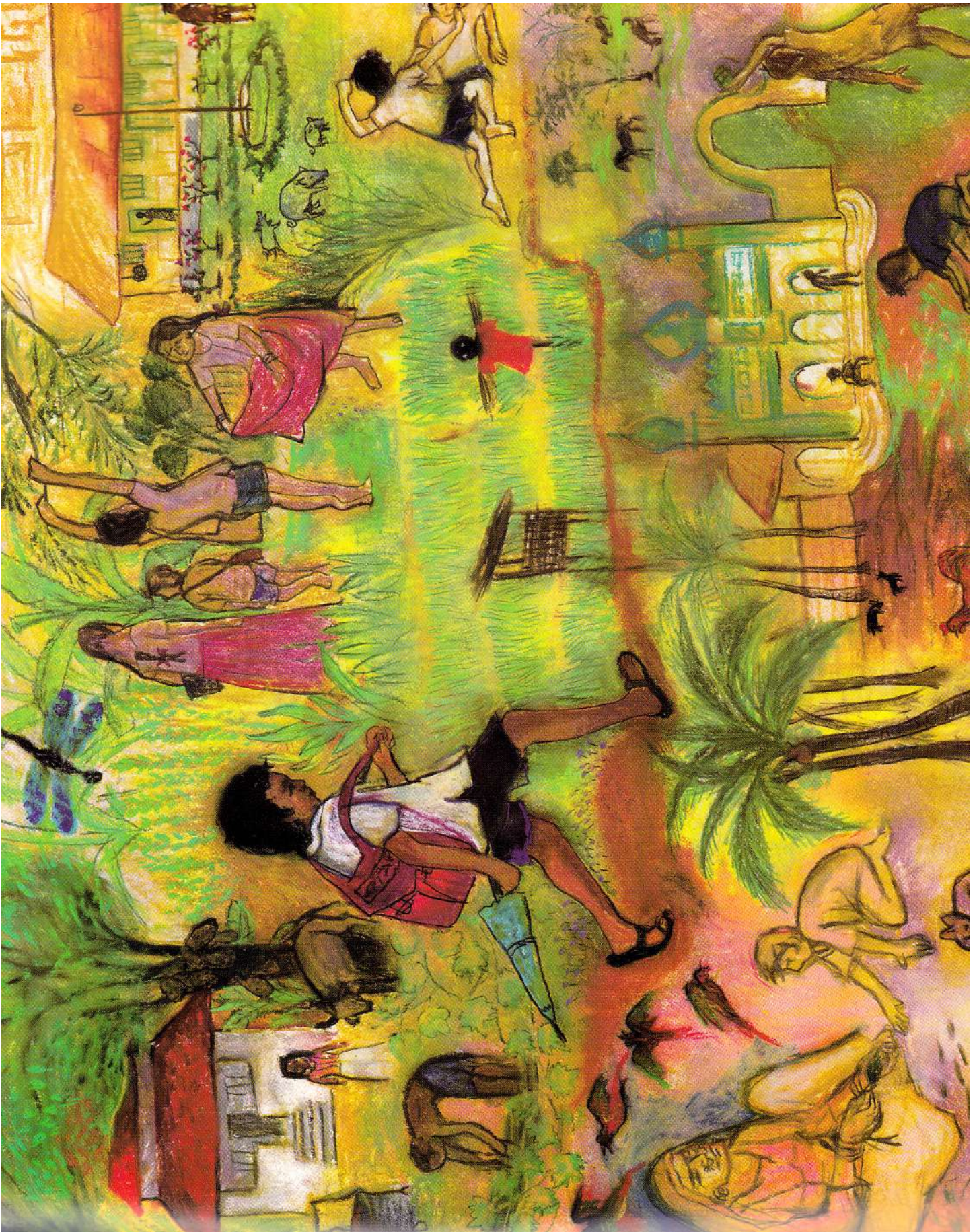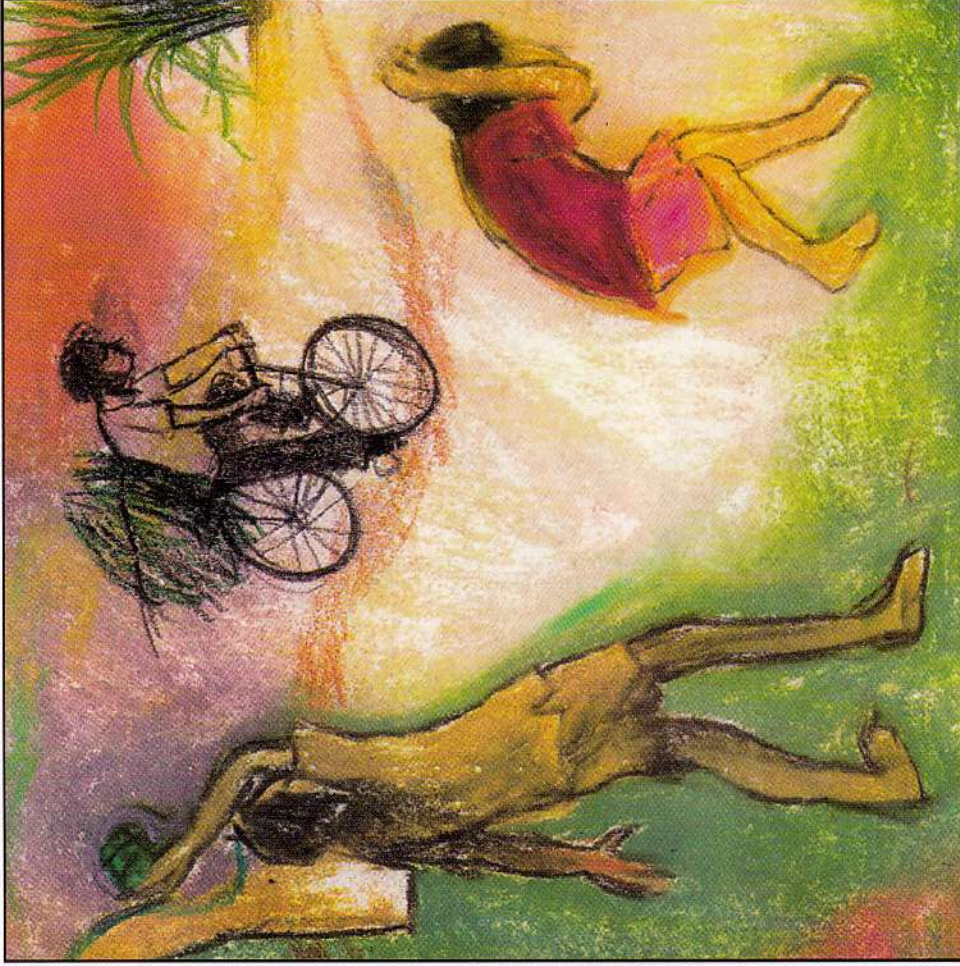
हाथ में टिफिन बॉक्स लिए साहिर दोस्तों के साथ हाथ धोने के लिए नल पर गया। दौड़ते हुए, ताकि सबसे पहले पहुँच सके।

स्कूल के दोस्त

जूपका सुभद्रा

चित्रांकन
सौम्या अनन्तकृष्णा

अँग्रेज़ी से अनुवाद
स्वयं प्रकाश

शृंखला सम्पादक
सुशील शुक्ल

एकलव्य

"कल झण्डा फहराया जाएगा। सब चीज़ें तैयार हैं न?" श्रीलता ने अपना बस्ता एक कन्धे से दूसरे कन्धे पर डालते हुए अपनी दोस्त सुवर्णा से पूछा।

"सब चीज़ों से तुम्हारा क्या मतलब है?" ज़मीन में ठोकर मारकर धूल उड़ाते हुए सुवर्णा ने पूछा।

"मेरा मतलब स्कूल ड्रेस, रिबन वगैरह... सब तैयार हैं न?" श्रीलता ने भी ठोकर मारकर धूल उड़ाते हुए साफ किया।

"हाओ! मेरे पास नई स्कूल ड्रेस है। रिबन भी हैं। तुम्हारे पास हैं? सुवर्णा ने पूछा।

"हाय कहाँ? मेरे पास तो एक वही है, पुरानी वाली। उसे झाड़ूँगी, दो-तीन बार साबुन से धोऊँगी, नील में डालूँगी, कलफ लगाऊँगी, इस्त्री करुँगी तो एकदम नई ड्रेस की तरह चमकने लगेगी।" श्रीलता ने कहा। फिर पूछा – "लेकिन तुमने नई ड्रेस कब सिलवाई?"

"जब स्कूल खुले। अय्या ने तीन ड्रेस सिलवाई थीं। मैंने सिर्फ एक पहनी और दो उठाकर रख दीं।" सुवर्णा ने कहा।

"मेरी माँ ने कहा जब कपास चुन ली जाएगी तब वह मेरे लिए एक ड्रेस और सिलवा देगी। तब तक इसी से काम चलाना पड़ेगा।" श्रीलता ने कहा।
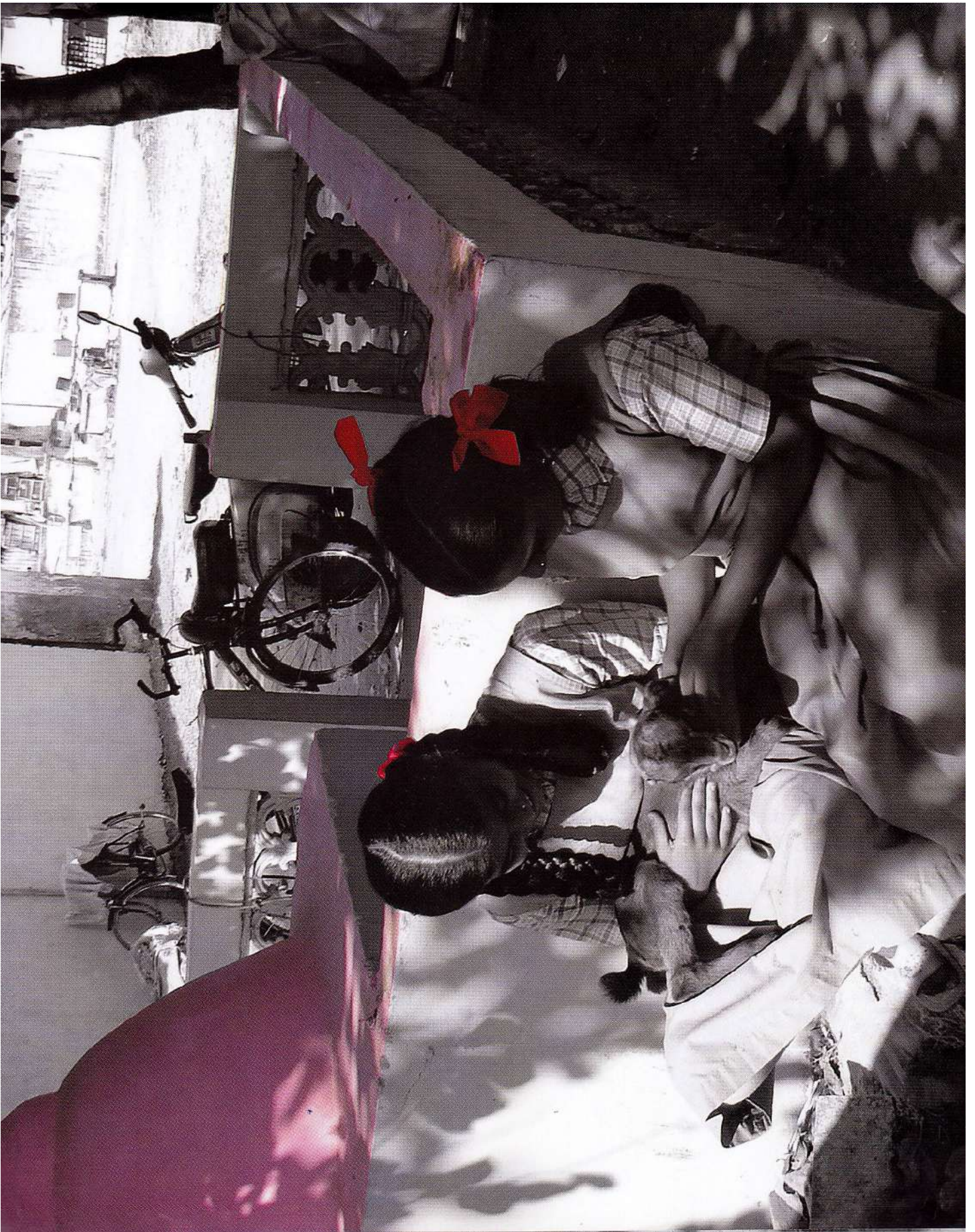
श्रीलता और सुवर्णा पहली कक्षा से एक ही स्कूल में पढ़ रही थीं। दोनों एक ही गाँव की थीं। प्राथमिक विद्यालय के बाद श्रीलता के माता-पिता उसे पास के गाँव में स्थित माध्यमिक विद्यालय में नहीं भेजना चाहते थे। श्रीलता ही क्या, गाँव के किसी परिवार ने अपनी लड़कियों को पढ़ने के लिए बाहर नहीं भेजा था। गाँव के स्कूल में तो इसलिए भेज देते थे कि स्कूल जाने के साथ-साथ वे घर की देखभाल भी आसानी से कर सकती थीं।

श्रीलता के माँ-पिता ने सोचा, अपना सब काम धाम, चौका-चूल्हा, बर्तन-भाण्डे, बच्चे एक पुरुष की तरह छोड़ ही देना है तो पढ़ाई-लिखाई करने का क्या फायदा? कुछ भी हो, जिससे उसकी शादी होगी उसके साथ ही उसे रहना होगा। वह पढ़ाई करना चाहती थी मगर इसके लिए वह अपने माँ-पिता के निर्णय के खिलाफ नहीं जा सकती थी।

जब टीचरजी को पता चला कि श्रीलता स्कूल जाना छोड़ रही है तो वह श्रीलता के घर गए। "आपकी बेटी बहुत होशियार है। उसे घर-गृहस्थी से बाँधकर उसकी ज़िन्दगी खराब मत करो।" उन्होंने श्रीलता के पिता से कहा और बड़ी देर तक उन्हें समझाते रहे।

इतना ही नहीं, सुवर्णा के पिता सम्बन्ना जो एक बुनकर थे, वह तो अपनी बेटी के लिए कोई अच्छा-सा लड़का ढूँढने लगे थे। वह सोच रहे थे कि दोनों लड़कियाँ साथ-साथ स्कूल चली जाएँगी। सम्बन्ना ने श्रीलता के पिता पोशालु से बात की। "पोशन्ना! आखिर चेन्नापुरम का स्कूल है कितनी दूर गाँव से?"

ज़्यादा दूर तो है नहीं। तुम थूकोगे और तुम्हारा थूक सूखने से पहले तुम वहाँ जाकर वापस आ सकते हो। मेरी बेटी सुवर्णा भी वहाँ जाएगी। दोनों लड़कियाँ हैं। घर का कामकाज सुबह निबटा लेंगी और दिन ढलने से पहले हमारे सामने होंगी।

"मैं भी उसे स्कूल भेजना चाहता हूँ लेकिन पता नहीं भेजना सुरक्षित है या नहीं।" पोशन्ना ने कहा।

"ज़माना बदल गया है। सारी दुनिया जिधर जा रही है, उसकी उलटी तरफ क्यों जाएँ? ऐसी ज़िद से क्या फायदा? पीढ़ी दर पीढ़ी क्या तुम काँदा-कीचड़ में हाथ घुसेड़े रहोगे और जीने की खातिर अपने बैलों को कोंचते रहोगे? इस सबको छोड़ो और अपनी बेटी को स्कूल भेजो।" सम्बन्ना ने पोशन्ना से कहा।

पोशन्ना ने खूब सोचा। बेटी मेहनत-मजूरी करते-करते पीली पड़ जाए, इससे तो अच्छा है कन्धे पर बस्ता टाँगे, हँसते-उछलते स्कूल जाए। "सही बात है! बेटी हमारी पढ़-लिख जाएगी, तो हम भी शान से मूँछ पर ताव देंगे। चाहे जैसे भी हो, मैं श्रीलता को चेन्नापुरम पढ़ने भेजूँगा।" उसने सम्बन्ना से वादा किया। बस तब से ही श्रीलता और सुवर्णा साथ-साथ स्कूल जा रही हैं। दोनों अच्छी दोस्त बन गई हैं।

सुवर्णा के पिता मोटरसाइकिल पर नए कपड़ों की गठरी लादे कपड़े बेचने गाँव-गाँव जाते थे। उसकी माँ खेत में हल चलाती थी। श्रीलता के परिवार के पास सिर्फ आधा एकड़ सूखी ज़मीन थी। वहाँ बोने से बहुत थोड़ी फसल होती थी। घर चलाने के लिए उसके माँ-बाप दिहाड़ी पर मज़दूरी करते थे। पढ़ने में श्रीलता सुवर्णा से ज़्यादा तेज़ थी। वह नियम से स्कूल जाती थी, ध्यान से पाठ उतार लेती थी और गृहकार्य भी आसानी से कर लेती थी। अध्यापक हमेशा उसकी तारीफ करते थे। अगर कभी श्रीलता को घर पर काम होता और वह स्कूल नहीं जा पाती तो उस दिन सुवर्णा भी स्कूल नहीं जाती। अपनी दोस्त के बगैर स्कूल में उसका मन ही नहीं लगता। श्रीलता के साथ भी ऐसा ही था। जब कभी दोनों में झगड़ा होता दोनों एक-दूसरे से बात करना छोड़ देंती, लेकिन शीघ्र उनमें सुलह हो जाती और दोनों की चटर-पटर फिर शुरू हो जाती। दोनों साथ में खूब मस्ती करतीं और मज़े से खेलते-कूदते घर लौटतीं। घर से लाया खाना दोनों मिल-बाँटकर खातीं। दोनों एक-दूसरे को अपने मनके, चेन, चूड़ी और बिन्दी दे देती, लेकिन यह सब स्कूल में या स्कूल से घर के रास्ते में ही होता था। गाँव लौटने पर दोनों लहसुन की कलियों की तरह चुपचाप अपने-अपने घर चली जातीं।

"तो? तुम नई ड्रेस नहीं पहनोगी?" सुवर्णा ने फिर पूछा।

"मेरे पास नहीं है तो कहाँ से पहनूँगी?" श्रीलता ने जवाब दिया।

"मेरे पास दो हैं। एक तुम ले लेना।" सुवर्णा ने श्रीलता को प्यार से देखते हुए कहा।

"नहीं बाबा! तुम्हारे लोगों को पता चला तो वो चुप बैठेंगे?" श्रीलता बोली।

"मैं इस तरह लाऊँगी कि किसी को पता नहीं चलेगा।" सुवर्णा बोली।

"रहने दे बहना! तू मेरा हाथ भी पकड़ लेती है तो मेरी माँ मुझे ऊपर से नीचे तक दस मिनट घूरती रहती है।" श्रीलता ने कहा।

"अरे यार, एक दिन की ही तो बात है। तुम वहाँ पहन लेना और यहाँ उतारकर मुझे दे देना। ठीक है न? हमें चूड़ियाँ और मनके भी तो बदलने हैं! वैसे ही ड्रेस बदल लेंगे। उसमें क्या है? सुवर्णा ने श्रीलता को राज़ी करने की कोशिश की।"

श्रीलता भी नई ड्रेस पहनने की खुशी महसूस तो करना चाहती थी, लेकिन... अगर किसी को पता चल गया तो? खुशी तो कहीं रह जाएगी और बेकार का झगड़ा-झंझट और शुरू हो जाएगा। और अगर ये हुआ तो इसका मतलब होगा स्कूल आना बन्द! खामखाँ मुसीबत कौन मोल ले।

वह डर रही थी, फिर भी सुवर्णा की खातिर वह मान गई। इसके बाद दोनों अपने-अपने घर की तरफ चली गईं।

अगले दिन सुबह सुवर्णा अपने बैग में नई ड्रेस रख लाई और रास्ते में उसने उसे निकालकर श्रीलता के बैग में रख दिया। "कल इसे पहनना।" उसने श्रीलता से कहा। श्रीलता ड्रेस घर ले तो आई लेकिन डर रही थी। अगर उसके माँ-बाप ने देख लिया तो? पूछेंगे – दूसरों के कपड़े पहनने की क्या ज़रूरत थी? तो वह क्या जवाब देगी? लेकिन पन्द्रह अगस्त के दिन दोनों सुबह जल्दी ही काम पर निकल गए। श्रीलता खुश हुई कि चलो! अब उसे नई ड्रेस पहनने से कोई नहीं रोकेगा।

श्रीलता और सुवर्णा दोनों उस दिन नई ड्रेस पहनकर स्कूल गईं। झण्डावन्दन के समय भी श्रीलता के मन में धुकधुकी मची हुई थी कि कहीं उसकी चोरी पकड़ी न जाए। घर लौटते समय एक-दो लोगों ने टोका भी, तेरे बाप के पास फूटी कौड़ी नहीं, फिर भी तुझे नई ड्रेस तो सिलवा ही दी।"

लौटते समय चॉकलेट और बिस्कुट खाते हुए सुवर्णा ने श्रीलता से कहा, "ड्रेस को धोना मत। जाते से ही उतार देना, एक कागज़ में लपेटकर बस्ते में रख लेना और कल मुझे लौटा देना।"

"धोऊँ नहीं?" श्रीलता ने अचरज से पूछा।

"धोओगी तो घरवाले पूछेंगे नई ड्रेस कहाँ से लाई? सबके सामने अपनी पोल खुल जाएगी।" अपने घर की तरफ दौड़ लगाते हुए सुवर्णा ने कहा।
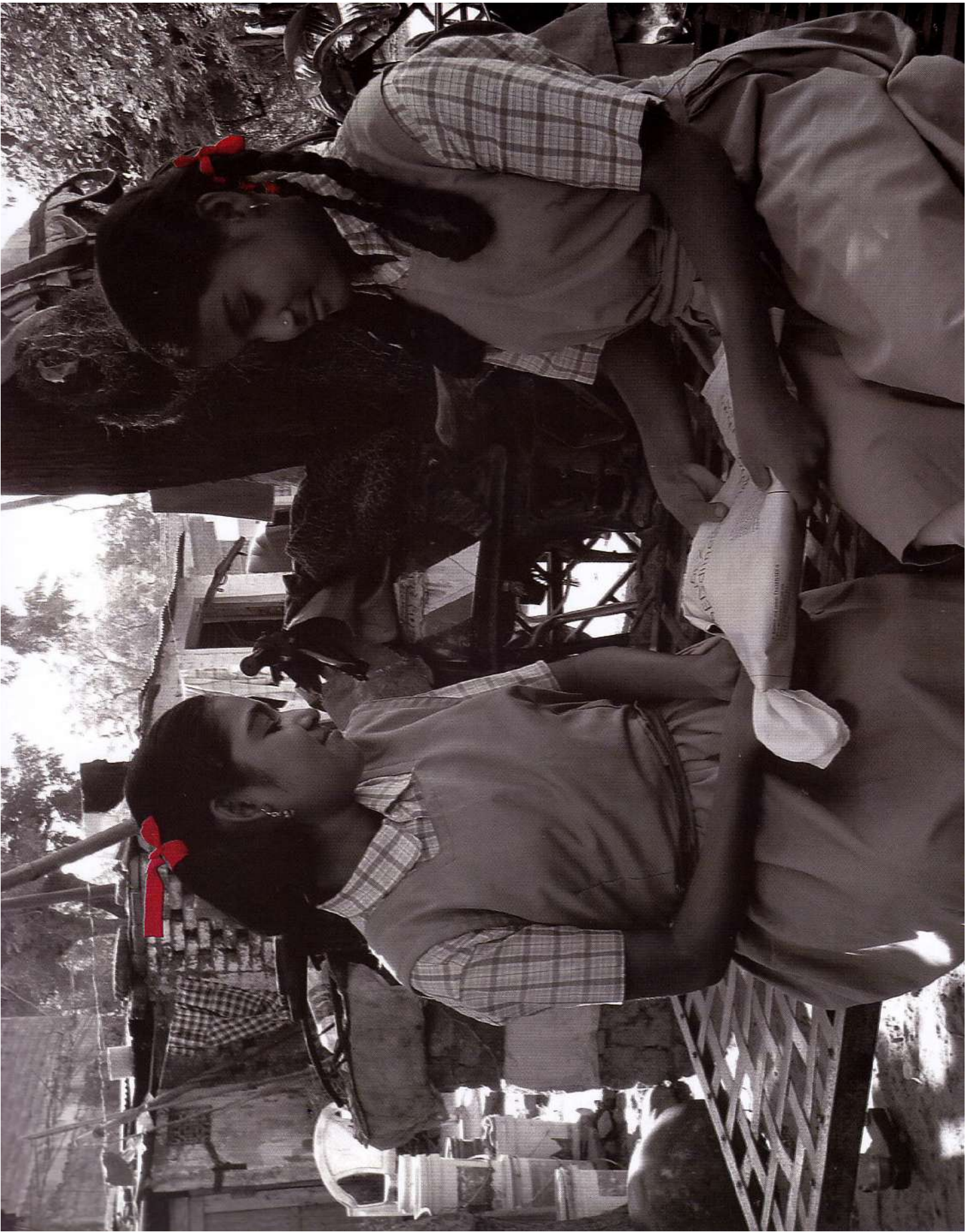
अगले दिन सुवर्णा किताबों के बीच रखे श्रीलता द्वारा लौटाए गए ड्रेस के पैकेट के साथ घर में घुसी। उसे देखते ही माँ ने पूछा – "आ गई मेरी बच्ची?" भैंस का बछड़ा खूँटा तुड़ाकर भाग गया है। जा ज़रा उसे पकड़ ला।

माँ ने सुवर्णा के कन्धे से स्कूल का बस्ता लिया और बोली – ये बछड़ा भी... नहीं ठहरता। मजाल है कोई रस्सी उसे बाँध ले।

कहते-कहते उसने सुवर्णा का बस्ता खूँटी पर टाँग दिया।

इसी बीच ताड़ी उतारने वाली भूमक्का आ गई। बोली – "कोवुरक्का, तुम्हारी बेटी आ गई क्या?"

"आ गई, लेकिन बछड़ा भाग गया न, तो उसे लेने गई है। क्या हुआ? उससे क्या काम है?"

"पेन चाहिए था।"

"पेन क्यों चाहिए?"

"मेरे बेटे को बच्ची रेड्डी का पता लिखना है।" भूमक्का ने कहा।

सुवर्णा की माँ भीतर गई और सुवर्णा के बस्ते में हाथ डालकर पेन निकालने लगी। उसे पेन नहीं मिला तो उसने सारी किताबें निकालकर अलग रखीं, कपड़ों का बण्डल भी निकालकर अलग रखा, बैग से पेन निकाला और भूमक्का को दे दिया। फिर जब वह किताबें वापस बस्ते में रखने लगी, उसकी नज़र कपड़ों के बण्डल पर पड़ी। उसे ज़रा मैला हो चुका सफेद ब्लाउज़ और नीला स्कर्ट दिखाई दिया। "ये लड़की मैले कपड़े बस्ते में क्यों रखती है?" उसने सोचा। "आने दो उसे।" पूछती हूँ।
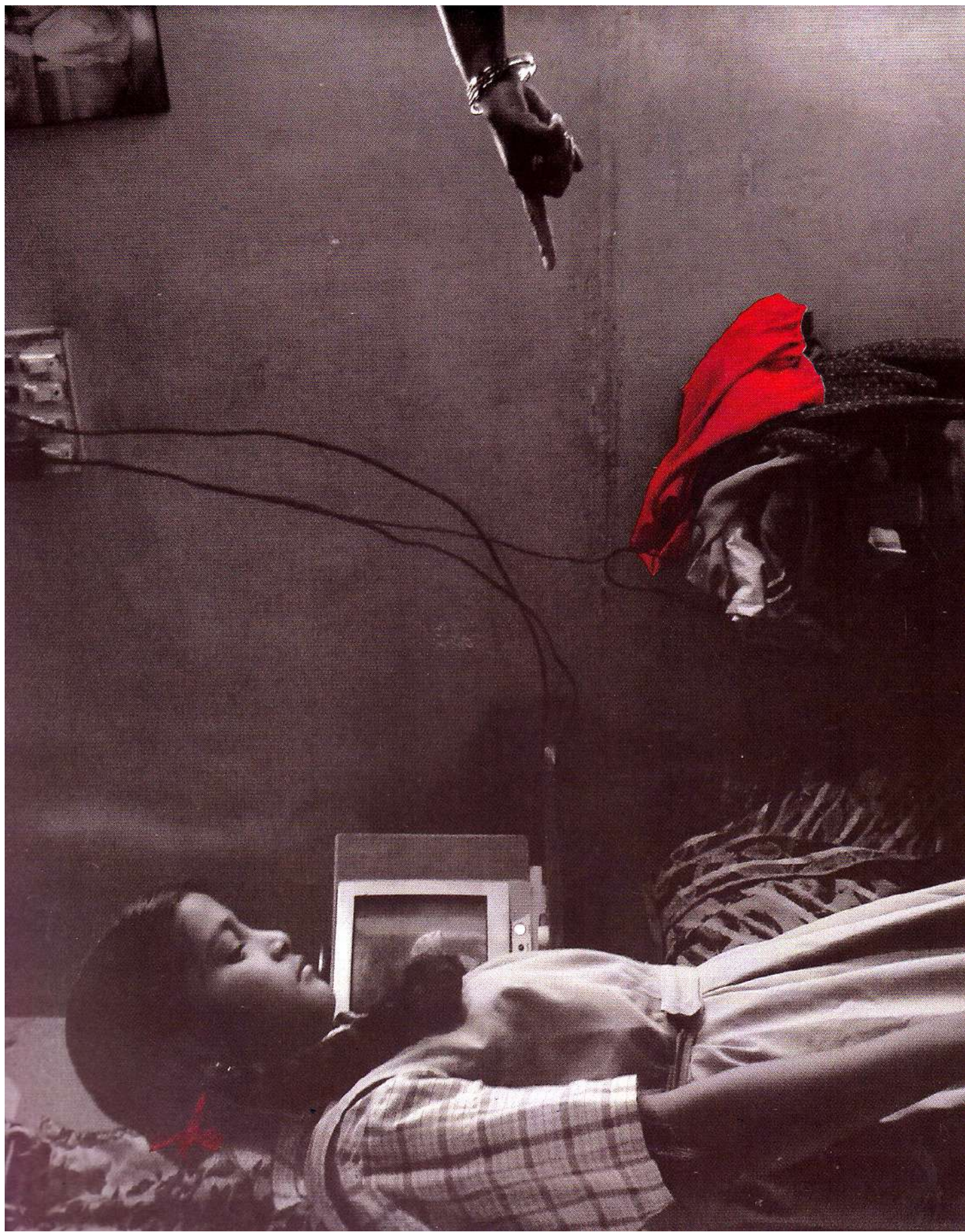
सुवर्णा बछड़े को घसीट लाई। उसे बाँधने के लिए सुवर्णा को रस्सी पकड़ाते हुए माँ बोली, "बेटा! तुम्हारे बस्ते में ये कपड़े कैसे रखे हैं?" इस अचानक से सवाल से सुवर्णा हड़बड़ा गई। उसे लगा नहीं था कि माँ उसका बस्ता टटोलेगी और ड्रेस के बारे में पूछताछ करेगी। उसे समझ में नहीं आया क्या कहे! वह इतना घबरा गई कि उससे झूठ भी नहीं बोला गया। डरते-डरते उसने सारी सच्ची बात बता दी।

"तुझे हो क्या गया है, बेवकूफ! पहली बात तो तूने उस मडिंगा लड़की को अपनी ड्रेस दी क्यों? और फिर वापस भी ले आई? उससे लेकर तूने उसे अपनी किताबों के साथ क्यों रखा?" माँ चिल्लाती हुई, गुस्से में तमतमाती भीतर गई, ड्रेस उठाकर लाई और उसे घर के बाहर फेंक दिया।

"मैंने उसे दी क्योंकि वो मेरी दोस्त है। इसमें क्या हो गया?" सुवर्णा ने धीरे से कहा।

"दोस्त! दोस्ती स्कूल में होती है, हमारे गाँव में नहीं। नई की नई ड्रेस बरबाद कर दी। अब जला दो उसे! तू उसे वापस लाई क्यों? उस मरदूद के पहनने के बाद क्या तू वह ड्रेस पहन सकती है? तुझे समझ में नहीं आती तो ये बात उस मरदूद को तो समझ में आती होगी। उसकी हिम्मत कैसे हुई अपने पहने हुए कपड़े तुझे पकड़ाने की?" माँ बकती रही और बेटी की पीठ पर धप लगाती रही।

"कीड़े पड़ें उसकी पढ़ाई में। चार अक्षर क्या पढ़ गई बड़े-छोटे का फर्क ही भूल गई। घमण्ड उसके सिर में चढ़ गया है। उसके माँ-बाप ने उसे नहीं बताया कि उस में और हम में फर्क है? चुपचाप क्यों खड़ी है?" डाल उस पर घासलेट और जला दे उसे।

सुवर्णा को धक्का देकर माँ भीतर नाली के पास गई और रगड़-रगड़कर अपने हाथ धोने लगी। सुवर्णा खड़ी-खड़ी रोती रही और बाहर पड़े कपड़ों के बण्डल को देखती रही।

बेचारी श्रीलता। वही हुआ जिसका मुझे डर था। माँ को बस्ता थमाकर मुझे बछड़े के पीछे भागना पड़ा वरना तो मैं बड़े आराम से ड्रेस का बण्डल छुपा लेती। सारी पोल खुल गई। सब इस बछड़े के कारण! सुवर्णा ने सोचा! माँ की मार से ज़्यादा उसे उसका अपनी दोस्त को कोसना बुरा लग रहा था। घर की बाड़ पर सिर रखे वह बड़ी देर रोती रही।

"लड़की! तू आदमी है या कौन है? मैंने तुझसे कहा डाल उस पर घासलेट और जला दे, और तू है कि मूरत की तरह खड़ी है।" माँ बड़बड़ाती हुई आई। माँ ने स्टोव से घासलेट निकालकर कपड़ों के बण्डल पर डाला और उसमें आग लगाने लगी। सुवर्णा जो अब तक रो रही थी, फुर्ती से लपकी, ड्रेस का बण्डल उठाया और श्रीलता के घर की तरफ दौड़ गई।

सुवर्णा की माँ देखती रह गई। वह अपनी बेटी का पीछा नहीं कर सकती थी।

स्कूल की अनकही कहानियाँ

SCHOOL KI UNKAHI KAHANIYAN

मूल तेलुगू कहानी:

तीन-चौथाई, आधी कीमत, बज्जी-बज्जी (मोहम्मद खादीर बाबू) चित्रांकन: सुरेश बी वी

पाठ्यपुस्तक (नुआईमन) चित्रांकन: चित्रा के एस

स्कूल के दोस्त (जूपका सुभद्रा) चित्रांकन: सौम्या अनन्तकृष्णा

डिज़ाइन: चिनन
अँग्रेज़ी से अनुवाद: स्वयं प्रकाश
शृंखला सम्पादक: सुशील शुक्ल

Anveshi

डिफरेंट टेल्स: स्टोरीज़ फ्रॉम मार्जिनल कल्चर्स एंड रीजनल लैंग्वेज, हैदराबाद के अन्वेषी रिसर्च सेंटर फॉर विमेन्स स्टडीज़ की एक पहल।
अँग्रेज़ी तथा मलयालम में डी सी बुक्स, कोट्टायम, केरल द्वारा और तेलुगू में हैदराबाद के अन्वेषी रिसर्च सेंटर फॉर विमेन्स स्टडीज़ द्वारा प्रकाशित।

पराग इनिशिएटिव, टाटा ट्रस्ट, मुम्बई के वित्तीय सहयोग से विकसित
संस्करण: जून 2019 / 2000 प्रतियाँ
पहला पुनर्मुद्रण: जनवरी 2022 / 2000 प्रतियाँ
कागज़: 100 gsm मैट आर्ट व 210 gsm पेपर बोर्ड (कवर)
ISBN: 978-93-85236-38-9
मूल्य: ₹ 150.00

प्रकाशक: एकलव्य फाउण्डेशन
जमनालाल बजाज परिसर
जाटखेड़ी, भोपाल 462 026 (म प्र)
फोन: +91 755 297 7770-71-72-73
www.eklavya.in / books@eklavya.in

मुद्रक: आर के सिक्युप्रिंट, भोपाल; फोन: +91 755 268 7589

किताबों की सूची

सिर का सालन

फिर जीत गई ताटकी और दिलेर बड़ेय्या

फटेहाल आदमी

स्कूल की अनकही कहानियाँ

दो नाम वाला लड़का तथा अन्य कहानियाँ

माँ

पुरानी पाठ्यपुस्तकें खरीदना चाहते हो? सोच में पड़े हो कि क्या करें? हमारा छोटा हीरो दिखाएगा कि पुरानी पाठ्यपुस्तकें खरीदते वक्त एक व्यापारी की तरह फायदे का सौदा कैसे किया जाता है।

तीन-चौथाई, आधी कीमत, बज्जी-बज्जी

सहीर को अपनी मलयालम की पाठ्यपुस्तक में कोई मुस्लिम नाम नहीं मिलता। अगर मुस्लिम नाम गायब कर दिए गए हैं तो सहीर उन्हें अपने ढंग से वापस ला सकता है!

पाठ्यपुस्तक

श्रीलता और सुवर्णा स्कूल में बहुत पक्की दोस्त हैं। लेकिन गाँव में, जाति उनकी दोस्ती के आड़े आती है।

स्कूल के दोस्त

मूल्यः ₹ 150.00

parag
AN INITIATIVE OF TATA TRUSTS

एकलव्य

9 789385 236389
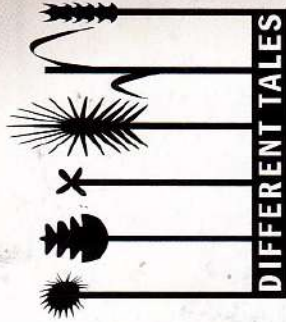
डिफरेंट टेल्स क्षेत्रीय भाषा की कहानियाँ ढूँढ-ढूँढकर निकालता है, ऐसी कहानियाँ जो ज़िन्दगी की बातें करती हैं – ऐसे समुदायों के बच्चों की कहानियाँ जिनके बारे में बच्चों की किताबों में बहुत कम पढ़ने को मिलता है। कई सारी कहानियाँ लेखकों के अपने बचपन का बयान करते हुए बड़े होने के अलग-अलग ढंगों को प्रस्तुत करती हैं, प्रायः एक प्रतिकूल दुनिया में जहाँ वे हमजोलियों, पालकों और अन्य वयस्कों से नए सम्बन्ध बनाते हैं। ज़ायकेदार व्यंजनों, छोटे-छोटे जुगाड़ू खेलों, स्कूल के अनापेक्षित सबकों और दिलदार दोस्तियों के माध्यम से ये कहानियाँ हमें एक दिलकश सफर पर ले जाती हैं।